जैनाचार्य डॉ. शिवमुनि, डी.लिट् की खोज

आत्म-ध्यान

ME WITHIN ME

भगवान महावीर की साधना
का मूलाधार है ...
" आय तुले पयासु "
Empathy not sympathy
सहानुभूति नहीं समानुभूति
ही जैन दर्शन है ...
यही आत्म ध्यान है ।

•

ME WITHIN ME: UNTIL YOU FIND YOURSELF YOU WILL ALWAYS BE SOMEONE ELSE.

प्रकाश बियाणी

शिवाचार्यजी कहते हैं कि भारतीय धर्मों में मोक्ष पर शोध करते हुए मैंने सभी धर्मों के पुरातन साहित्य को पढ़ा तो जाना कि भारतीय धर्मों में विविधता है, विचार भिन्नता है पर मुक्ति के लिए सब ध्यान को स्वीकार करते हैं। ध्यान धर्म नहीं है। यह तो जीवन संगीत है। ध्यान की कोई भाषा, कोई रंग या स्पर्श नहीं है। विज्ञान का जिस तरह कोई धर्म या वर्ण नहीं है उसी तरह ध्यान भी आध्यात्मिक विज्ञान है, यह भारत में ज्यादा लोकप्रिय है क्योंकि इसकी यहाँ खोज हुई। हिन्दू, बौद्ध या जैन धर्मावलम्बी ध्यान साधना ज्यादा करते हैं क्योंकि इसे इन धर्मों ने खोजा और विकसित किया। इसका मतलब यह नहीं है कि ध्यान पर केवल हिन्दू, बौद्ध या जैन का एकाधिकार है।

भगवान महावीर ने आत्मा को शाश्वत आनन्दरूपा कहा है-

जैसे जल के कण-कण में शीतलता समाई है,
वैसे ही आत्मा के कण-कण में आनंद समाया हुआ है।

यही बुद्ध ने कहा है। यही उपनिषद कहते हैं। सबका निहितार्थ एक ही है - ध्यान से भीतर का ज्ञान प्रकट होता है। आत्म ज्ञान उद्घाटित होता है। कैसे... जल की जरूरत हो तो दूरंदेशी शख्स कुआँ खोदता है, हौज नहीं बनाता। वह जानता है कि भू-गर्भ में जल है। इसे डिस्कवर करना है। वह मिट्टी की परतें हटाता है। कुआँ जितना नीचे जाता है उसमें जल के उतने ही झरने फूटते हैं। पर हौज जमीन के ऊपर उठता है। उसमे जल भरना पड़ता है जबकि कुए की झीरें समुद्र से जुड़ी होती है। हम कुआँ खोद रहे हैं या हौज बना रहे हैं। जीवन जल चाहिए तो आत्मा पर जमा हो गई परतें हटानी पड़ेंगी। आत्मा की गहराई में जितना उतरेंगे उतने झरने फूट पड़ेंगे।

जैनाचार्य डॉ. शिवमुनि, डी.लिट् की खोज

आत्म ध्यान

ME WITHIN ME

भगवान महावीर की साधना का

मूलाधार है ...

"आय तुले पयासु "

Empathy not sympathy

सहानुभूति नहीं समानुभूति

ही जैन दर्शन है ...

यही आत्म ध्यान है ।

•ध्यानगुरू डॉ. शिवमुनि

ME WITHIN ME: UNTIL YOU FIND YOURSELF
YOU WILL ALWAYS BE SOMEONE ELSE.

प्रकाश बियाणी

- आशीष -जैन धर्म दिवाकर,युगपुरुष, ध्यानयोगी आचार्यश्री डॉ. शिव मुनिजी म.सा.
- प्रस्तुति -आत्म ध्यान (Me Within Me)
- परामर्श - श्रमण संघ प्रमुख मंत्री श्री शिरीष मुनिजी, श्री शुभम मुनिजी एवं श्री सुशीलजी जैन
- प्रयास- श्री प्रकाश बियाणी
- सहयोग - श्री निलेश पराशर/ श्री सुनील पांडे
- प्रकाशक - शिवाचार्य ध्यान समिति
- प्रकाशन सहयोग - लाला नेमनाथ जैन, इंदौर
- प्रथम संस्करण - जुलाई, 2018 (प्रतियाँ 5000)
- द्वितीय संस्करण - अक्टूबर, 2019 (प्रतियाँ 5000)
- सहयोग राशि - 100 रू.

प्राप्ति सूत्र-

1. शिवाचार्य ध्यान सेवा समिति, आदीश्वर धाम, कुप्प कलां, जिला- संगरूर(पंजाब) 148019
2. श्री सुशील जैन, करनाल मो. 94160 34463
3. श्री अनिल जैन, 1924 गली नं. 5, कुलदीप नगर, लुधियाना(पंजाब) मो. 94170 10298
4. शिवाचार्य समवसरण, एफ- 3/20, रामा विहार, ओंकार धाम रोड, कराला रोड, समीप सेक्टर 22 - रोहणी, दिल्ली 110085 मो. 93501 11542

- मुद्रण समन्वय : इन्टेक प्रिंटर्स एंड पब्लिशर्स, करनाल मो. 9354101541

Visit us our website	:	www.jainacharya.org
Email	:	shivacharyaji@yahoo.co.in
Facebook	:	http://www.facebook.com./shivmuni
Android App	:	JAINACHARYA
Twitter	:	http://www.twitter.com/jainacharya
YouTube	:	http://www.youtube.com/jainacharyaji
Whatsapp No.	:	93501-11542

अनुक्रम

अध्याय	पृष्ठ स.
यह पुस्तक क्यों?	5
भूमिका	9
खंड -1	
1. क्या है ध्यान?	11
2. क्यों करें ध्यान?	21
3. कैसे करें ध्यान?	33
4.. आत्मरंजन है ध्यान!	41
खंड -2	
1. आत्म ज्ञान है आत्म ध्यान	45
2. आत्म बल लौटाता है आत्म ध्यान	59
3. आत्म ध्यान के आलम्बन	75
4. आत्मा के लिए शरीर का उपयोग है आत्म ध्यान	83
5. क्या होगा आत्म ध्यान से?	91
खंड -3	
1. ध्यान परिचय	99
2. आत्म ध्यान गुरु आचार्य डॉ. शिव मुनिजी	143
3. आत्म योगी श्री शिरीष मुनिजी	149
4. युवा मनीषी श्री शुभम मुनिजी	151
उपसंहार	153

यह पुस्तक क्यों?

श्रमण संघ के आचार्य ध्यानगुरू डॉ. शिव मुनिजी की आत्मकथा और उनकी खोज आत्म ध्यान पर पुस्तक **स्व की यात्रा** को प्रबुद्ध पाठकों ने सराहा, धन्यवाद। आचार्यश्री से भी मुझे इस आदेश के साथ शाबासी मिली कि मैं ध्यान और आत्म ध्यान पर भी एक पुस्तक लिखूं। यह विषय अत्यंत जटिल था और सच कहूँ तो मेरे लिए मुश्किल भी। इसे समझने के लिए मैंने आचार्यश्री की पीएच.डी. थीसिस भारतीय धर्मों में मोक्ष (जैन धर्म के विशेष सन्दर्भ सहित) और पुस्तक- **ध्यान एक दिव्य साधना** को बार- बार पढ़ा। इस पुस्तक के लिए उन्हें डी.लिट्. से नवाजा गया है। मैंने उनकी अन्य पुस्तकों का भी अध्ययन किया। उनसे और उनके ज्येष्ठ शिष्य श्री शिरीष मुनिजी से चर्चा की। तदनुसार, यह पुस्तक मेरी कृति नहीं है बल्कि आचार्यश्री के साहित्य का सार-संक्षेप हैं।

आत्म ध्यान (Me within Me) पुस्तक तीन खंड में हैं। प्रथम खंड में ध्यान की खोज और ध्यान की विभिन्न विधाओं का उल्लेख है। ध्यान का ध्येय है- मनुष्य में अविकसित सम्भावना को उजागर और विकसित करना। मानव को आनंद और शांति की अनुभूति करवाना।

पुस्तक का दूसरा खंड है- आत्म ध्यान। इसका ध्येय है- मनुष्य की देह में मौजूद उर्जा के आंतरिक स्रोत की खोज। आचार्यश्री के अनुसार हमारी देह उस उर्जा (आत्मा) की खोल मात्र है। आत्म ध्यान आत्मा से साक्षात्कार है। शाश्वत सुख का राज मार्ग है।

पुस्तक का तीसरा खंड आत्म ध्यान शिविर का शाब्दिक रूपांतरण है। आत्मा ध्यान शिविरों का संचालन करनेवाले श्री शिरीष मुनिजी के अनुसार बल्ब की खोज करने में एडिसन को वर्षों लग गए थे। 700 बार वे फेल हुए लेकिन बल्ब बन गया तो स्विच ऑन करते ही रोशनी होने लगी। ऐसे ही आचार्य भगवन् ने संयम के 45-46 वर्ष साधना करके आत्म ध्यान को खोजा है। भगवन ने आंतरिक उर्जा के बोध का केप्सुल तैयार किया है। अब जैसे बल्ब ऑन करने से रोशनी होती हैं वैसे ही आत्म ध्यान शिविर से शांति और आनंद मिलता है।

मित्रों, मैं मूलत: बिजनेस वर्ल्ड का लेखक हूँ। मेरी दो दर्जन से ज्यादा पुस्तकों में से धर्म और अध्यात्म पर यह तीसरी पुस्तक है। आचार्यश्री डॉ. शिवमुनिजी ने मुझ पर जो भरोसा दर्शाया है उसके लिए मैं उनका आभारी हूँ। प्रमुख मंत्री श्री शिरीष मुनिजी और श्री शुभम मुनिजी के सहयोग के बिना इस पुस्तक का लेखन सम्भव नहीं था। प्रेस्टीज समूह के चेयरमेन नेमनाथजी जैन और डॉ. मन्मथनाथ पाटनी को भी धन्यवाद। शिवाचार्य ध्यान समिति के अध्यक्ष श्री सुशीलजी जैन के फालोअप और प्रयासों के कारण इस पुस्तक का विमोचन आचार्यश्री के उदयपुर वर्षावास सन् 2018 के प्रवेश पर हो रहा है।

यहाँ यह स्पष्ट करना भी जरूरी है कि वैष्णव वैश्य होने से जैन परम्पराओं से मैं अनभिज्ञ हूँ। इस अज्ञानता के कारण पुस्तक में कोई चुक हुई हो तो क्षमा कर दें।

अंत में यही कहूँगा- खुद को जाने बिना आप किसी को नहीं जान सकते..

Until you find yourself you will always be someone else.

–प्रकाश बियाणी

prakashbiyani@yahoo.co.in • Mobile: 93032 23928

द्वितीय संस्करण

परम श्रद्धेय आत्मज्ञानी सद्गुरु द्वारा वर्षों की एकांत मौन साधना का प्रतिफल है - 'आत्म ध्यान'।

'आत्म ध्यान' अर्थात स्वयं की पहचान आचार्य भगवन की लगभग 45 वर्षों की अनवरत व् संयमित साधना के परिणामस्वरूप अभूतपूर्व खोज है जिसका सरलतापूर्वक सुन्दर विवेचन इस पुस्तक में हुआ है। आचार्य श्री ने इस जटिल विषय का स्वयं मंथन किया, स्वयं खोजा और शोध किया, फिर स्वअनुभूति द्वारा जो अनुभव प्राप्त हुआ उसको आत्मसात करके जन-साधारण तक पहुँचाने का प्रयास ही इस पुस्तक के प्रकाशन का उद्देश्य रहा। इसके प्रथम संस्करण का प्रकाशन जुलाई 2018 में मोहक झीलों के शहर उदयपुर में जैन रत्न लाला श्री नेमनाथ जी के अर्थ सहयोग तथा प्रबुद्ध लेखक श्री प्रकाश बियानी जी के सहयोग के संभव हुआ।

5000 प्रतियां अति शीघ्र पाठकों तक पहुँच गई। इस पुस्तक की लोकप्रियता को ध्यान में रखते हुए इसके द्वितीय संस्करण का प्रकाशन जैन रत्न लाला श्री नेमनाथ जी के अर्थ सहयोग से अक्टूबर, 2019 में पुणे में किया जा रहा है।

आशा है साधकजन इस पुस्तक के स्वाध्याय द्वारा स्वयं को पहचानने में सक्षम हो पाएंगे।

सुशील जैन
अध्यक्ष, शिवाचार्य ध्यान सेवा समिति

भूमिका

आत्मा में छिपे परमात्म तत्व की खोज है आत्म ध्यान

श्रमण संघीय प्रमुख मंत्री श्री शिरीषमुनि जी म.सा.

जीव से शिव की यात्रा है आत्म ध्यान

ध्यान गुरू आचार्य सम्राट पूज्य श्री शिवमुनि जी म.सा. ने वर्षों की आत्म साधना के पश्चात स्वयं शोध करके जन साधारण को सुखी होने का राजमार्ग बताया है। वर्षों से आपने एकान्त मौन ध्यान के द्वारा वीतरागों की साधना, जिनेश्वरों की ध्यान साधना की खोज को स्व साधना करके आत्मसात् किया जो आगमों में, ग्रन्थो मे वर्णन है उसे अनुभव किया।

प्रत्येक जीव को आनंद, शांति, सुख, समृद्धि की आवश्यकता है और यह सब उसके पास ही है। किन्तु विधि का ज्ञान नहीं होने से अज्ञान के कारण संपुर्ण जीवन लगाने के बाद भी उसके हाथ में शांति के स्थान पर अशांति मिलती है।

आचार्य श्री जी ने अपने पुण्य एवं तप से वर्षों शोध के पश्चात अरिहन्त परमात्मा श्री सीमन्धर स्वामी की कृपा से शुद्ध वीतराग विधि (जिसमें साधक अनादि का मिथ्यात्व तोड़कर सत्य का बोध प्राप्त करता है) प्राप्त की। जैन दर्शन में सत्य ही भगवान है। दो ही तत्व है जीव और अजीव, जिसे जड़ और चेतन कहा है, जड़ को साधन मानकर चेतन के लिए उपयोग करना प्रत्येक साधक का लक्षण है।

जीव आत्मा को अज्ञान, मोह, मिथ्यात्व के कारण स्वरूप का बोध नहीं हो रहा और वह अनन्तकाल से सुख, शांति आनंद के लिए भटक रहा है। वह सम्पन्न, सम्पुर्ण होते हुए भी भटक रहा है। आज भौतिक सुविधाओं का अंबार होते हुए भी साधक

क्यों दु:खी है। इन दु:खों से पार जाने के लिए सरलतम विधि है आत्म ध्यान।

यह इतनी सरल है जितनी स्वीच को ऑन करो तो प्रकाश मिलेगा ही, उसमे शंका नहीं इसी प्रकार आत्म ध्यान करोगे तो तुरन्त शांति, सुख, समृद्धि की प्राप्ति होगी ही।

अध्यात्म की सबसे ऊँची साधना प्रत्येक जीवात्मा के लिए उपलब्ध है। उसे आप श्रद्धा से आत्मसात् करे।

श्री प्रकाश जी बियाणी ने ध्यान गुरू आचार्य श्री शिवमुनि जी म.सा. के आत्म ध्यान को जन साधारण तक पहुंचाने हेतु इस पुस्तक लेखन का पुरूषार्थ कर महत्वपूर्ण कार्य किया है। तदर्थ हार्दिक साधुवाद।

ध्यान गुरू शिवाचार्य श्री जी की अन्तर्यात्रा तक पहुंचने की प्यास जगाएगी यह पुस्तक। प्रयोग के लिए आप हमारे प्रशिक्षक द्वारा स्वयं प्रयोग करे। गंभीर शिविर में पहुंच कर आत्म साक्षात्कार करें एवं जीवन को सफल बनायें। जीवन का लक्ष्य तय करे।

मिथ्यासुख से अनन्त सुख की यात्रा करनी है तो आत्म ध्यान करे। शरीर में छिपे जीव का धर्म जानकर धर्म में जीवन जीते हुए जीवात्मा को परमात्मा बनाना ही प्रत्येक साधक की यात्रा है। आप सब को आत्म ध्यान द्वारा आत्मा का अनुभव ज्ञान प्राप्त हो।

खंड - 1 | अध्याय - 1

क्या है ध्यान?

आज की भागदौड़ भरी जिंदगी में लोग खुशियों के पीछे भाग रहे हैं। जो नहीं मिला, जो नहीं हुआ उसके लिए दु:खी है। इस बात से चिंतित हैं कि जो चाहते हैं वह भविष्य में भी मिलेगा या नहीं। इस उहापोह में जो मिला है उसका भी सदुपयोग नहीं कर रहे हैं। जो मिल सकता है वह भी खो रहे हैं। खुशियाँ कहीं बाहर नहीं है, यहीं है और अभी है। खुशियाँ ही नहीं शांति भी आपके अंतर्मन में है, आपके भीतर है। भीतर प्रवेश का सबसे सरल तरीका है ध्यान। ध्यान की कई पद्धतियाँ है, जिनमें से एक है आत्म ध्यान। इसके अन्वेषक है- जैनाचार्य ध्यानगुरू डॉ. शिवमुनि।

हमारे देश में सहस्त्रों वर्षों तक ऋषि- मुनि ध्यान साधना करते रहे। वे तो सिद्ध पुरुष हो गए पर ध्यान जन-जन तक नहीं पहूँचा । भगवान महावीर या तथागत गौतम बुद्ध अहिंसा और करुणा के लिए जाने जाते है पर उनकी भारतीय अध्यात्म को इनसे बड़ी देन है- ध्यान साधना से मोक्ष की प्राप्ति का मार्ग।

ध्यान साधना का ध्येय है- मनुष्य में समाहित अविकसित सम्भावना को उजागर और विकसित करना। मानव को आनन्द- शांति और ज्ञान की अनुभूति करवाना, शाश्वत सुख का राज मार्ग दिखाना और जीवन मुक्त दशा का बोध करवाना।

ध्यान साधना कैसे करें? इससे क्या मिलेगा? इसकी विस्तार से चर्चा करने के पहले पतंजली के योग सूत्र को जानें जिसका एक सूत्र है- ध्यान।

योग दर्शन

योग दर्शन के आदि आचार्य हिरण्यगर्भ हैं। लुप्त हो चुके हिरण्यगर्भ सूत्रों के आधार पर मुनि पतंजली ने योगसूत्र की रचना की हैं। इसके अनुसार चित्तवृत्तिनिरोध योग है। इसका मतलब है- चित्त की वृत्तियों को चंचल होने से रोकना । मन को इधर उधर भटकने न देना, स्थिर रखना।

महर्षि पतंजली के योगसूत्र में शारीरिक, मानसिक और आत्मिक शुद्धि के लिए आठ अंगों वाले योग का विस्तार से उल्लेख है। यह वस्तुत: आठ आयामों वाला मोक्ष मार्ग है। पतंजली योग में जिन आठों आयामों का अभ्यास एक साथ किया जाता है, वे हैं-

1. यम- पांच सामाजिक नैतिकता

(क) अहिंसा - शब्दों से, विचारों से और कर्मों से किसी को हानि नहीं पहुँचाना।

(ख) सत्य - विचारों में सत्यता के साथ परम-सत्य में स्थित रहना।

(ग) अस्तेय - चोर-प्रवृति न होना।

(घ) ब्रह्मचर्य - इन्द्रिय-जनित सुखों में संयम बरतना।

(च) अपरिग्रह- आवश्यकता से अधिक संचय नहीं करना।

2. नियम - पाँच व्यक्तिगत नैतिकता

(क) शौच - शरीर और मन की शुद्धि।

(ख) संतोष - संतुष्ट और प्रसन्न रहना।

(ग) तप - स्व-अनुशासन।

(घ) स्वाध्याय - आत्मचिंतन करना।

(च) ईश्वर-प्रणिधान - ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण और पूर्ण श्रद्धा।

3. आसन- स्थिर अवस्था में बैठकर सुख की अनुभूति।

4. प्राणायाम- सांस की गति को धीरे-धीरे वश में करना।

5. प्रत्याहार- इन्द्रियों को बाहरी विषयों से हटाकर आंतरिक विषयों में लगाना।

6. मैं एक आत्मा हूँ। शरीर नहीं हूँ।

7. ध्यान- मन की एकाग्रता।

8. समाधि-ध्यान करते- करते देह का भान समाप्त हो जाना।

महर्षि पतंजली के योगसूत्र के आठवें चरण समाधि को भारतीय अध्यात्म में मोक्ष कहा गया है। भारत के विभिन्न धर्मों में मोक्ष के लिए जिन पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग हुआ है, वे हैं- मुक्ति, सिद्धि, निर्वाण, अमरत्व, बोधि, विमुक्ति, विशुद्धि या कैवल्य। भारतीय धर्मों और दर्शन का यही सर्वोपरि लक्ष्य है।

भारतीय धर्मों में मोक्ष की अवधारणा (विशेष सन्दर्भ जैन धर्म) विषय पर शोध करनेवाले आत्म ध्यान गुरु शिवाचार्य कहते हैं- हमारे यहाँ सारी साधना, सारे तप-जप मोक्ष के लिए ही किए जाते हैं। मोक्ष के संबंध में सभी भारतीय धर्मों में इस समानता के बावजूद इसके स्वरूप को लेकर मत-मतांतर हैं। यह ऐसा ही है जैसे एक ही भवन के विविध कोणों से लिए गए चित्र। ये अलग-अलग होकर भी उस भवन के ही चित्र हैं। इसी तरह मोक्ष के विवरण में विविधता के बावजूद सारे चिंतक एक ही सत्य उजागर करते हैं, जो हैं- परमतत्व। यह हमारे शब्दों की सीमा से परे है, वर्णनातीत हैं। वस्तुत: यह अनुभव है, जिसे शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता। वैसे ही जैसे अनेक लोग गुड़ खाते हैं पर शब्दों से वे इसके स्वाद को अभिव्यक्त नहीं कर पाते हैं। मोक्ष या मुक्ति को शब्दों में व्यक्त करना वैसा ही है जैसे कोई नक्शे से हिमालय की ऊंचाई या गंगा की गहराई समझने की कोशिश करे।

वैदिक धर्म के बहुदेवतावादी पुरोहितों का विश्वास था कि यज्ञों के माध्यम से अमरता प्राप्त की जा सकती है। वैदिक समाज के अनुयायी मानते हैं कि शुभ कर्म करनेवाले स्वर्ग और अशुभ कर्म करनेवाले नरक जाते हैं। उपनिषद् कहते हैं कि व्यक्ति के कर्म का फल आगामी जन्म में मिलेगा ही। ईश्वर का ज्ञान हो जाता है तो सारे बंधन कट जाते हैं। जन्म-मरण का चक्र समाप्त होना ही मोक्ष है।

हिन्दू धर्म के सबसे महत्वपूर्ण ग्रन्थ भगवद्गीता में मुक्ति के तीन मार्ग बताए गए हैं- ज्ञान योग, कर्म योग और भक्ति योग। भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं- लोक-परलोक को मिथ्या बंधन समझकर, मुझ एक, अद्वितीय सच्चिदानंद की शरण में आ जा, मैं तुम्हें समस्त पापों से मुक्त कर दूंगा। तदनुसार, वैदिक दर्शन के अनुसार ईश्वर में आस्था के साथ मुक्ति का मार्ग है- निष्काम-कर्म।

भगवान बुद्ध के दर्शन का मूलाधार है- दु:ख और दु:ख निरोध। उन्होंने कहा है- यह संसार दु:ख, व्याधि, प्राकृतिक प्रकोप, दंड, ईर्ष्या, घृणा, धोखा, मोह इत्यादि से भरा हुआ है। व्यक्ति को इन सांसारिक प्रपंचों से मुक्ति का प्रयत्न करना चाहिए। बुद्ध के इस कथन का आशय है- समूची सांसारिक प्राप्तियां मरण और पुनर्जन्म पर आधारित हैं। धम्मपद में कहा गया है- स्वास्थ्य सबसे बड़ी देन है, संतोष सबसे बड़ा धन है, विश्वास सबसे बड़ा संबंध है और निर्वाण सबसे बड़ा सुख है। ज्ञान के बिना ध्यान नहीं हो सकता और बिना ध्यान के ज्ञान नहीं हो सकता। जिसके पास ज्ञान और ध्यान दोनों हैं वह परम सुख और शांति की अवस्था में हैं। यही निर्वाण है।

सिख धर्म कुछ मत-मतान्तरों के साथ जैन, बौद्ध और हिन्दू धर्म से मिलता-जुलता है। आदिग्रंथ का प्रारम्भिक मूलमन्त्र है- ईश्वर एक है। उसका नाम सत्य है, वही सृष्टा है। वह समझ से परे है। उसका अनुभव गुरु के आशीर्वाद से ही होता है।

सिख धर्म ईश्वर और स्वर्ग में अंतर करता है। भक्ति का उद्देश्य स्वर्ग-प्राप्ति नहीं, ईश्वरानुभूति है। सिख धर्म में इसीलिए ईश्वर की भक्ति को सबसे अधिक महत्व दिया गया है। नाम सिमरण (स्मरण) से भक्ति बढ़ती है। सिख धर्म मूर्ति पूजा नहीं करता और कहता है कि जिसके हृदय में ईश्वर का वास है, सुख-दु:ख, स्वर्ग-नरक, अमृत-विष, मान-अपमान आदि में जो सम है, वही ईश्वर की अनुभूति कर सकता है। जन्म-मरण के चक्रव्यूह से छुटकारे में बाधक है- काम, क्रोध, लोभ, मोह और मान। मनुष्य ईश्वर की इच्छा के अनुसार चले और अहंकार त्याग दे तो ईश्वरानुभूति का मार्ग मिल जाता है। सिमरण ही ईश्वर की स्मृति का सबसे सुलभ साधन है। यही संसार सागर के लिए जहाज है।

मुक्ति का जैन सिद्धांत

जैन धर्म के आगम के गहन स्वाध्यायी शिवाचार्यजी के अनुसार जैन विचारक मानते हैं कि हमारे आचार का नियंता धर्म है । धर्म बाहर से ओढ़ी जाने वाली वस्तु नहीं है। उनके अनुसार धर्म आत्मा का स्वभाव है।

'वस्तु का स्वभाव ही धर्म है' - इस दर्शन में जैन चिंतक धर्म की सम्पूर्णता देखते हैं। वे कहते हैं कि अग्नि का स्वभाव ऊष्ण है, जल का स्वभाव शीतल है, नमक का स्वभाव नमकीन है, मिर्च का स्वभाव तीखापन है और यही उनका धर्म है। व्यक्ति भी अपने स्वभाव के अनुसार सृष्टि को जानता और देखता है। वस्तु और व्यक्ति के स्वभाव को धर्म मान लेने पर तेरा-मेरा के समस्त विवाद, झगड़े-फसाद स्वयमेव समाप्त हो जाते हैं। अग्नि उष्ण है तो सभी के लिए उष्ण है, सर्वदा उष्ण है, सर्वत्र उष्ण है। आज गर्म है तो कल ठंडी नहीं हो जाएगी। ऐसा भी नहीं हो सकता

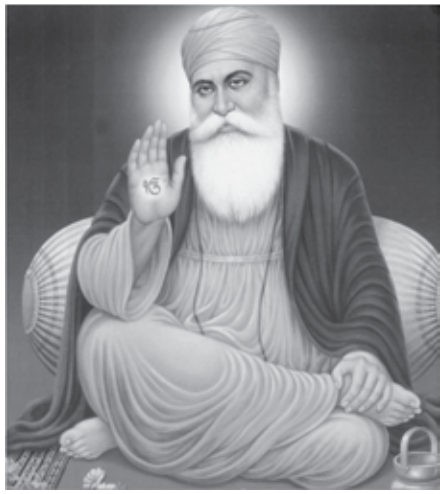

कि हिन्दू के लिए उष्ण हो तो मुसलमान के लिए ठंडी। यह भी नहीं होता कि हिंदुस्तान के लिए गर्म है तो पाकिस्तान के लिए ठंडी। वस्तुओं के बिना न इहलोक है और न ही परलोक। जहाँ-जहाँ वस्तुएं हैं, वहाँ-वहाँ धर्म है।

जैन विचारक ऐसी किसी शक्ति में विश्वास नहीं करते जो सृष्टि या संसार को नियंत्रित करती हो। जैन धर्म आत्मा को केंद्र में रखकर चिन्तन- मनन और तप- साधना करता है। जैन परम्परा में धार्मिक क्रिया-कलापों का अंतिम उद्धेश्य मोक्ष की प्राप्ति है, पर जब तक कर्म है, तब तक संसार है। यही पुनर्जन्म का कारण है। प्रत्येक कर्म का अच्छा या बुरा परिणाम होता है। कर्ता को इस जन्म या अगले जन्म में उसका फल भोगना ही पड़ता है। जो व्यक्ति पुनर्जन्म से मुक्ति चाहता है उसे कर्म की श्रंखला को काटना पड़ता है।

जैन मानते हैं कि पुण्य और पाप दोनों एक हैं। जैसे लोहे की बेड़ी बांधती है वैसे ही सोने की बेड़ी। शुभ और अशुभ दोनों ही कर्म बंधन हैं। सांसारिक व्यक्ति कर्मों से बंधा है, इसलिए वह अपूर्ण और मोहासक्त है। मोक्ष प्राप्त करने के लिए कर्मों से मुक्ति अनिवार्य है।

जैन दर्शन कहता है कि मोक्ष पद प्राप्त करने के लिए साधक की दृष्टि में शत्रु और मित्र एक समान होना चाहिए। सुख और दु:ख में एक समान होना चाहिए। प्रशंसा और निंदा में एक समान होना चाहिए। यही नहीं, जीवन और मरण में समभाव होना चाहिए। ऐसा पवित्र समभाव तब ही आता है, जब साधक सम्यकदर्शन, सम्यकज्ञान और सम्यकचरित्र का एक साथ समान रूप से आचरण करता है। ऐसे आचरण से ही जन-जन को मिले- अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत सुख और अनंत

शांति। उनके रोजमर्रा के जीवन से तनाव घटे, उनका शरीर स्वस्थ रहे, मन शांत हो। दुनिया में शांति और सदभाव हो, सब खुश रहे और ख़ुशी बांटे।

शिवाचार्यजी कहते हैं कि भारतीय धर्मों में मोक्ष पर शोध करते हुए मैंने सभी धर्मों के पुरातन साहित्य को पढ़ा तो मैं इस निष्कर्ष पर पहूँचा कि भारतीय धर्मों में विविधता है, विचार भिन्नता है पर मुक्ति के लिए सब ध्यान को स्वीकार करते हैं। ध्यान धर्म नहीं है। यह तो जीवन संगीत है। ध्यान की कोई भाषा, कोई रंग या स्पर्श नहीं है।

विज्ञान का जिस तरह कोई धर्म या वर्ण नहीं है उसी तरह ध्यान भी आध्यात्मिक विज्ञान है, यह भारत में ज्यादा लोकप्रिय है क्योंकि इसकी यहाँ खोज हुई। हिन्दू, बौद्ध या जैन धर्मावलम्बी ध्यान साधना ज्यादा करते हैं क्योंकि इसे इन धर्मो ने खोजा और विकसित किया। इसका मतलब यह नहीं है कि ध्यान पर केवल हिन्दू, बौद्ध या जैन का एकाधिकार है।

ध्यान साधना के लिए किसी मन्दिर या मूर्ति की जरूरत नहीं पड़ती। साधक खुद इसका मन्दिर है। खुद ही इसका ऑब्जेक्ट है और खुद ही लेबोरेटरी। यूँ भी धर्मावलम्बी होना एक संयोग है। सचाई तो यह है कि हर व्यक्ति इन्सान के रूप में जन्म लेता है और इन्सान ही मरता है। नाम, भाषा और वेशभूषा तो आवरण है जो मनुष्य को जन्म के बाद मिलते हैं। हमें जन्म के बाद बताया या समझाया गया है- हम जैन हैं, हम हिन्दू हैं, मुसलमान हैं, ईसाई हैं या सिख हैं। इन मुखोटों के पीछे सब चेहरे समान है। निदा फाजली ने कहा हैं -

आओ कहीं से

थोड़ी सी मिट्टी भर लाएँ

मिट्टी को बादल में गुंथे,

नए-नए आकार बनाएँ

किसी के सिर पर चुटिया रख दें

माथे उपर तिलक सजाएँ

किसी के छोटे से चेहरे पर

मोटी-सी दाढ़ी फैलाएँ

कुछ दिन उनसे जी बहलाएँ

और ये सब मैले हो जाएँ

दाढ़ी, चोटी, तिलक सभी को

तोड़-मोड़ के गड्ड-मड्ड कर दें

मिली-जुली यह मिट्टी भर दें

दाढ़ी में चोटी लहराए

चोटी में दाढ़ी छुप जाए

किसमें कितना कौन छुपा है

कौन बताए?

शिवाचार्यजी फरमाते हैं- मनुष्य कोई भी हो सबका अंतर्मन समान है। सबकी आत्मा समान है। सबको गुस्सा आता है। सब क्रोध करते हैं। सब लोभ लालच में फंसते हैं। सब सुखी होना चाहते हैं। धन के लिए सब संघर्ष करते हैं। सबके सांसारिक संघर्ष समान हैं। सबका तनाव समान है। सबकी बीमारी समान है. इन्सान कोई भी हो जैसे बिना भेदभाव योग सबको स्वस्थ रखता है वैसे ही ध्यान सबका मानसिक उपचार है।

फर्क साधना के तरीके में है। जैन धर्मावलम्बी आत्म ध्यान करते हैं इसलिए इसकी शुरुआत जिस प्रार्थना से होती है, वह है- नमो अरिहंतान्म...

प्रार्थना ध्यान नहीं है। यह तो ध्यान के पूर्व अपने इष्ट का स्मरण है। हिन्दू रामचन्द्र कृपालु भज मन... तो मुस्लिम ए मालिक तेरे बंदे हम.... जैसी प्रार्थना से ध्यान कर

सकते है। इससे ध्यान के परिणाम नहीं बदलते हैं।

अपने काम में गहनता से तल्लीन किसी व्यक्ति के कमरे में किसी भी धर्म का भजन या प्रार्थना बजाए। उससे पूछें कि उसने क्या सुना? वह कहेगा- पता नहीं। क्यों? क्योंकि वह व्यक्ति अपने कार्य में इतना तल्लीन है कि उसे कुछ सुनाई नहीं दे रहा है। उसे नहीं पता कितने प्रकार की ध्वनियाँ उसके कानों से टकरा रही हैं?

संसार का विस्मरण हो जाए, अपने शरीर का अनुभव बंद हो जाये और एक दिव्य तेज या शून्यता की अनुभूति होने लगे, यही ध्यान है। और भी सरल शब्दों में कहें तो कर्तापन का अभाव यानि यह काम मैं नहीं कर रहा हूँ। मैं शरीर से पृथक कोई और हूँ। यह भाव ध्यान है।

आइए, इसे एक कहानी से समझें ...

एक फकीर एक पहाड़ी के नीचे खड़ा था। आते- जाते लोग सोचते थे कि घंटों से यह फकीर यहाँ क्यों खड़ा है? इस बात को लेकर तीन लोगों में बहस होने लगी। एक ने कहा- पहाड़ी में इसकी गाय खो गई होगी। उसके लौटने का इंतजार कर रहा है। दूसरे ने कहा- ऐसा नहीं है खोजनेवाली आँखे भटकती हुई होती हैं। यह तो शांत खड़ा है। मुझे लगता है कि इसका कोई मित्र आने वाला है, यह उसकी प्रतीक्षा कर रहा है। तीसरा बोला- ऐसा होता तो वह पलटकर देखता। यह तो हिलता भी नहीं है। मुझे लगता है परमात्मा का स्मरण कर रहा है।

यह बहस झगड़े में बदलने लगी तो तीनों ने सोचा- फकीर से ही पूछ लेते हैं। पहले व्यक्ति ने उस फकीर से पूछा- क्या आपकी गाय खो गई है?

फकीर बोला- गाय? कैसी गाय? किसकी गाय? मेरा कुछ भी नहीं है। गाय मेरी कैसे हो सकती है? मैं कुछ नहीं खोज रहा हूँ।

दूसरे ने पूछा- तो आप किसी मित्र का इंतजार कर रहे है?

फकीर बोला- कैसा मित्र? कैसा दुश्मन? मेरा कोई मित्र नहीं। मेरा कोई दुश्मन नहीं है। मैं अकेला आया। अकेला जाऊँगा। किसी से क्यों कहूँ कि मेरे साथ चलो? मैं किसकी प्रतीक्षा क्यों करूं?

तीसरे ने कहा- तो आप भगवान की प्रार्थना कर रहे हैं?

फकीर हंसकर बोला- कैसा भगवान? कैसी प्रार्थना? मैंने कभी कोई प्रार्थना नहीं की। मेरी कोई कामना ही नहीं है तो मैं प्रार्थना क्यों करूं? मै अपने अतिरिक्त किसी को नहीं जानता।

उन तीनों ने कहा- अजीब बात है। फिर आप यहाँ कर क्या रहे हैं?

फकीर ने कहा- मैं तो केवल हूँ। यहाँ सिर्फ मैं ही हूँ।

एक बार फिर फकीर के जवाब पढ़ें। वह फकीर जो कह रहा है यही महावीर ने कहा था। यही बुद्ध ने कहा था। यही नानक ने कहा था और यही क्राइस्ट ने कहा था-

मेरा कुछ भी नहीं है...

मैं किसी का मित्र नहीं,

कोई मेरा दुश्मन नहीं...

मेरी कोई प्रार्थना नहीं,

मेरी कोई कामना नहीं।

यही ध्यान सिखाता है। यही ध्यान है।

अध्याय - 2

क्यों करें ध्यान?

ध्यान को अंग्रेजी में मेडिटेशन कहते हैं, लेकिन अवेयरनेस शब्द इसके ज्यादा नजदीक है। ध्यान का मूलाधार है- जागरूकता, होश, समता। ध्यान की सबसे महत्वपूर्ण प्राप्ति है- दृष्टा भाव। तदनुसार ध्यान दो दुनिया के बीच खड़े होने की स्थिति है। आशय है आप ही सोचो, आप ही करो पर जो सोचो जो करो उसे आप ही जागरूकता के साथ साक्षी भाव से देखो।

दृष्टा और साक्षी भाव से आशय है-

- मेरी देह मेरी नहीं है। यह तो परमात्मा का मन्दिर है।

- यह देह मुझे जन्म के साथ मिली। मरने के साथ छूट जाएगी।

- मैं जन्मा तब मेरा कोई नाम नहीं था। मेरी देह को दिया गया नाम मेरे मरने के बाद गुम हो जाएगा, भुला दिया जाएगा।

- पुनर्जन्म होगा तो नई देह को नया नाम मिलेगा।

- मेरा परिवार मेरा नहीं है। रिश्ते देह ने बनाए हैं। इस देह के ये माँ- पिता हैं, पत्नी- बच्चे है, मित्र- परिजन हैं। देह के जलते ही ये सारे रिश्ते- नाते खत्म हो जाएँगे।

- व्यापार संसार की व्यवस्था है। मैं हूँ तब तक मैं व्यापार कर रहा हूँ। मेरे बाद कोई और करेगा।

एक साधू का नाम राम था। वे कभी यह नहीं कहते थे कि मैं वहाँ गया या मैंने यह

किया। वे कहते थे- राम वहाँ गया, राम ने यह किया। एक दिन उन्होंने कहा- लोगों ने आज राम को गाली दी। एक व्यक्ति ने पूछा- यह राम कौन है जिसे लोगों ने गाली दी। वे बोले- यह मैं हूँ। उस व्यक्ति ने कहा- तो आप यह क्यों नहीं कहते कि लोगों ने आपको गाली दी। साधू बोला- ऐसा कैसे कहूँ? मैं तो तब देखने वाला था। लोग राम को गालियाँ दे रहे थे, मैं भी देख रहा था।

इस कहानी का निहितार्थ है- अपने सांसारिक नाम और पहचान को नकारना और देह में स्थित आत्मा या परमात्मा को स्वीकार करना।

अपने सांसारिक अस्तित्व को नकारना यानि कर्तापन का अभाव ही ध्यान है। वस्तुत: चेतन मन की एक प्रक्रिया है ध्यान। इसके द्वारा व्यक्ति स्वयं की चेतना केंद्रित करता है।

चलिए अब थोड़ा गहराई में गोता लगाएँ और उसे जानें जिस ध्यान को भारतीय दर्शन ने खोजा है।

ध्यान का अर्थ एकाग्रता नहीं है। एकाग्रता टॉर्च की स्पॉट लाइट की तरह है जो किसी एक वस्तु या दृश्य को ही फोकस करती है। ध्यान तो बल्ब है जो चारों दिशाओं में प्रकाश फैलाता है।

आंख बंद करके बैठ जाना भी ध्यान नहीं है। किसी मूर्ति के सामने बैठ जाना भी ध्यान नहीं है। माला जपना भी ध्यान नहीं है। यह तो स्मरण है। जाप है। स्मरण, जाप, पूजा-पाठ, उपवास-व्रत, भजन-कीर्तन से क्षणिक शांति मिलती है, पर ध्यान अनावश्यक कल्पना व विचारों को मन से निकालकर शुद्ध और निर्मल मौन में पहुँचने वाली घटना है। यह घटित हो जाए तो व्यक्ति पर किसी भी भाव, कल्पना और विचारों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। मन और मस्तिष्क मौन हो जाते हैं। विचार, कल्पना और अतीत के सुख- दु:ख में जीना बंद हो जाता है। ध्यान से वर्तमान को देखने और समझने में मदद मिलती है। अतीत खो जाता है। भविष्य की चिंता मिट जाती है। जो हमारे स्मरण में है, उनको गिराकर केवल चेतना मात्र रह जाना, केवल अवेयरनेस रह जाना, ध्यान है। यह वैसा ही है जैसे एक दीया जलाकर सारी चीजें हटा दें। क्या बचेगा? केवल उजाला।

एक दिलचस्प काल्पनिक कहानी है...

एक बार अंधेरे ने भगवान की अदालत में अर्जी लगाई- सूरज मेरे पीछे दौड़ता रहता है। मैं जहाँ होता हूँ, जहाँ जाता हूँ वहाँ से मुझे भगा देता है। यह दुश्मनी अनंत काल से चल रही है। अब मेरा धैर्य खत्म हो गया है। मेरी प्रार्थना है कि आप सूरज को समझाएँ कि वह मेरा पीछा न करे। मुझे अकेला छोड़ दे। मुझे भी जीने का अधिकार है।

जैसा कि अदालत में होता है, भगवान की अदालत ने भी सूरज को अपना पक्ष रखने के लिए बुलाया। अदालत ने सूरज से पूछा- अंधेरे ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है। क्या है शत्रुता? सूरज ने कहा- मैं अनंत काल से विश्व का भ्रमण कर रहा हूँ लेकिन अब तक मेरी अंधेरे से मुलाक़ात नहीं हुई। कौन है यह अंधेरा? मैं उससे मिला ही नहीं तो कैसी दुश्मनी? कैसा पीछा? कहाँ है अंधेरा? आप उसे बुलाओ ताकि मैं उसे पहचान लूँ। अनजाने में कोई भूल हुई होगी तो माफ़ी भी मांग लूँगा।

भगवान की अदालत में यह मुकदमा अनंत काल से लम्बित पड़ा है। अंधेरे से मिलवाने की सूरज की मांग अदालत पूरी नहीं कर पाई है। यह मामला कभी हल भी नहीं होगा। सूरज के सामने अंधेरे को कैसे बुलाया जा सकता है। अंधकार का अपना कोई अस्तित्व ही नहीं है। अंधकार तो प्रकाश के अभाव का नाम है।

ध्यान भी प्रकाश है। जो चित्त से सारे आब्जेक्ट्स हटा देता है। चित्त से सारी कल्पनाएं हटा देता है। जब सारी कल्पनाएं और सारे विचार हट जाते हैं तो चेतना अकेली रह जाती है।

चेतना के सामने कोई विषय, कोई आब्जेक्ट न होना ही ध्यान है। यह इतनी गहरी साधना है कि एक घड़ी ऐसी आती है जब श्वास भी विलीन हो जाती है। श्वास विलीन होगी तो शरीर विलीन हो जाएगा। जब सब विलीन हो जाएगा, तो जो शेष रहेगा, उसका नाम ध्यान है।

आप पूछेंगे कि इससे बेहतर होगा कि हम ईश्वर की धारणा करें? एक मूर्ति सामने रख ले और ध्यान करें। मूर्ति की धारणा करने से वह अवस्था नहीं

आएगी, जिसे ध्यान कहते हैं। मूर्ति की धारणा करने से ध्यान में मूर्ति आएगी।

रामकृष्ण के साथ यही हुआ था। वे काली की मूर्ति सामने रखकर ध्यान करते थे। वे आंख बंद करते तो वह मूर्ति सजीव हो जाती। वे आनंद में रहने लगे। फिर एक संन्यासी आया। उसने कहा- तुम जो कर रहे हो, यह केवल कल्पना है, यह इमेजिनेशन है। यह परमात्मा से साक्षात्कार नहीं है। रामकृष्ण ने कहा- पर मुझे तो काली के साक्षात दर्शन होते हैं।

उस संन्यासी ने कहा- यह काली का दर्शन है, उस आत्मा का नहीं जो परमात्मा का अंश है। उसका तो कोई रूप ही नहीं है। उसका कोई चेहरा नहीं है। कोई आकार नहीं है। कोई गंध नहीं है। कोई स्पर्श नहीं हैं। जिस क्षण चेतना निराकार में पहुँचती है, उस क्षण परमात्मा मिलता है। ऐसा नहीं होता कि परमात्मा वैसे ही आमने-सामने खड़ा हो जैसे हम खड़े हैं। ध्यान में वह घड़ी आती है जब आप सागर में बूंद की तरह विलीन हो जाते है। यही परमात्मा से मिलन की अनुभूति है।

इसके बाद उस सन्यासी ने रामकृष्ण से कहा- तुम जो कर रहे हो वह तो कल्पना है। परमात्मा की अनुभूति चाहते हो तो कल्पना की तलवार उठाओ और मूर्ति के टुकड़े कर दो। परमात्मा को पाने में यह अवरोध है। इसको गिरा दो।

बड़ा कठिन था ऐसा करना। रामकृष्ण ने कहा- जिसको इतने प्रेम से सँवारा, जिस मूर्ति को वर्षों साधा, जो मूर्ति जीवित लगने लगी उसको कैसे तोड़ दूँ। यह कुकृत्य मुझसे नहीं होगा। संन्यासी ने कहा- नहीं होगा यानि परमात्मा से मिलने की तुम्हारी चाह अभी थोड़ी कम है।

रामकृष्ण ने हिम्मत की और कल्पना की तलवार से उस मूर्ति के दो टुकड़े कर दिए। इसके बाद ध्यान में गए तो जाना कि सत्य क्या है। कल्पना से मुक्त हुए तब सत्य में प्रविष्ट हुए।

हमारा भी परमात्मा से प्रेम बहुत कम है। देह में क्या है यह जानना है तो ध्यान करें, ध्यान में जीएं। ध्यान तन, मन और आत्मा के बीच लयात्मक सम्बन्ध बना देगा। ध्यान उर्जा केंद्रित कर देगा। ऊर्जा केंद्रित होने से मन और शरीर में शक्ति का संचार होगा एवं आत्मिक बल मिलेगा।

जिस तरह ईसाई धर्म में प्रार्थना और इस्लाम में नमाज का महत्व है, वैसे ही हिंदू, बौद्ध और जैन धर्म में ध्यान का महत्व है। ध्यान की कई विधियाँ हैं। आप किसी भी विधि से ध्यान साधना करें- इंद्रियाँ मन के साथ, मन बुद्धि के साथ और बुद्धि अपने मूल स्वरूप आत्मा में लीन होने लगेगी। यह वैसा ही है जैसे अग्नि में कुछ भी डालो तो वह जलकर स्वाहा हो जाता है और अग्नि पवित्र बनी रहती है। इसके अलावा अग्नि की कई खूबियाँ हैं. अग्नि उष्णता देती है। अग्नि तपाती है, निखारती है, प्रकाश देती है और ऊंचाइयों की ओर अग्रसर होती है।

ध्यान भी अग्नि की तरह ही है। जितनी भी बुराईयाँ हैं, सब उसमें जलकर भस्म हो जाती हैं। जिस प्रकार से अग्नि में तपने से सोना कुंदन बनकर निखर जाता है, ठीक उसी प्रकार ध्यान की अग्नि से जीवन कुंदन बनता है। जीवन कुंदन बनने से आशय है दिव्यता की प्राप्ति।

अपने आप को सफेद करने के लिए बर्फ को नहाना नहीं पड़ता। इसी तरह आत्मबल प्राप्त करने के लिए कोई शिक्षा या धन नहीं चाहिए। साधक को केवल अपनी सही पहचान तक पहुँचना है। ध्यान वह पोस्टमेन है जो इस पहचान का पता ठिकाना बताता है। वहां तक पहुँचाता है।

भारतीय अध्यात्म में कहा गया है- अहं ब्रम्हास्मि। यानि मुझ में ही परमात्मा है। मैं अपने आप में पूर्ण हूँ। बुद्ध ने कहा है- खुद को स्वीकार करो, प्रेम करने के लिए सबसे योग्य व्यक्ति स्वयं तुम हो।

भगवान महावीर ने कहा- जे एगं जाणइ से सव्वं जाणइ यानि जिसने अपने आप को जान लिया, उसने सबको जान लिया।

विडम्बना यह है कि विश्व में सबसे ज्यादा आध्यात्मिक होने के बावजूद हम भूल गए हैं कि हमारा जन्म किसी खास वजह से हुआ है। इसे जानने से ही सफलता और पूर्णता मिलती है। ध्यान का यही लक्ष्य है- आपसे आपको मिलवाना॥ आपको अपने ही उस आत्मबल का बोध करवाना जो आपके भीतर है पर जिसे आप भूल गए हैं।

एक सफल और सम्पन्न व्यक्ति एक दिन एक सिद्ध पुरुष के पास पहुँचा। उसने उस संत से कहा- मैंने सुना है कि आप भगवान के मित्र हैं। भगवान आपके पास आते हैं। महात्मा ने कहा- आपने सही सुना है। उस शख्स ने कहा- अबकी बार जब भगवान आएँ तो क्या आप उन्हें मुझसे मिलवा देंगे। महात्मा ने कहा- मैं तो भगवान को आपके घर भेज दूंगा। आपका पता बताएँ। शख्स ने महात्मा को अपने घर का पता लिखकर दिया। महात्मा ने कहा- यह तो आपके घर का पता है, आपका पता क्या है? उस शख्स ने अपने दफ्तर का पता लिख दिया। महात्मा ने कहा- अरे भाई मैं तुमसे तुम्हारे घर या दफ्तर का नहीं, तुम्हारा स्वयं का पता मांग रहा हूँ।

बात गहरी थी। उस शख्स को समझ में नहीं आई। महात्मा ने समझाया- मित्र, ईश्वर हम सबसे मिलने का निरंतर प्रयास करता है परन्तु हम अपना पता भूल गए हैं।

क्या यही जीवन है? न जन्म का पता। न जीवन का पता और न मृत्यु का पता ! इसीलिए जफर ने कहा है-

लाई हयात, आए, क़ज़ा ले चली, चले

न अपनी ख़ुशी आए, न अपनी ख़ुशी चले

हो उम्र-ए-खिज्र भी तो हो मालूम वक्त-ए-मर्ग

हम क्या रहे यहाँ अभी आए अभी चले

हम से भी इस बिसात पे कम होंगे बदकिर्दार

जो चाल हम चले सो निहायत बुरी चले

बेहतर तो है यही कि न दुनिया से दिल लगे

पर क्या करें जो काम न बेदिल्लगी चले

लैला का नाक़ा दश्त में तासीर-ए-इश्क़ से

सुन कर फ़ुग़ानी-ए-क़ैस बजा-ए-हादी चले

नाज़ाँ न हो खरिद पे जो होना है हो वही

दानिश तिरी न कुछ मिरी दानिश-वरी चले

दुनिया ने किस का राह-ए-फना में दिया है साथ

तुम भी चले चलो यूँही जब तक चली चले

जाते हवा-ए-शौक़ में हैं इस चमन से ज़ौक़

अपनी बला से बाद-ए-सबा अब कभी चले

(जिन्दगी ले आई तो आ गए. मृत्यु ले चली तो चल दिए। न आने में हमारी खुशी पूछी गई। न ले जाने में हमारी इच्छा जानी गई।)

दूसरे शब्दों में, दरिया में एक तिनके की तरह जिन्दगी बहती रही। एक लहर आई किनारे पर आ गए। दूसरी लहर आई भंवर में फंस गए। इसे तो जीवन नही कहा जा सकता?

हम सबके मन में कभी न कभी ये सवाल जरुर पैदा होता है कि इस जीवन का अर्थ क्या है? क्या हम सिर्फ जन्म लेने, जीवन जीने और मरने के लिए इस दुनिया में आए है। ये सवाल कई और सवाल खड़े करता है कि जन्म क्या है? मृत्यु क्या है?

ऐसे सारे सवालों का जवाब है ध्यान। जब भी आपके पास समय हो शांत होकर बैठ जाइए। कम से कम अपनी दस साँसो तक अपने को महसूस करने की कोशिश कीजिए। जब आपको लगे कि आप साँसो को स्पष्ट रूप से महसूस कर रहे हैं तो उन्हें सहज रूप में लाने की कोशिश कीजिए। जब आपको लगे कि आप अपनी साँसो के साथ सहज हो गए हैं तो अपनी धड़कनों को महसूस कीजिए। धीरे- धीरे शांत होकर अपने स्वभाव में, शांति में आत्मा में स्थित हो जाइए। यही ध्यान है। बिलकुल सरल। ध्यान बस धैर्य मांगता है। निरन्तरता मांगता है, यानि सतत अभ्यास।

भारतीय ज्ञान और ध्यान परम्परा शिव, महावीर और बुद्ध की परम्परा है। यह व्यक्ति को मन के जंजाल से मुक्त करके चैतन्य से रूबरू करवाने की परम्परा है।

ध्यान की कोई कीमत नहीं है, पर ध्यान से ज्यादा मूल्यवान कोई चीज नहीं है। ध्यान प्रत्येक व्यक्ति का अधिकार है क्योंकि परमात्मा बनने के लिए हमारा जन्म हुआ है। ध्यान हमें अपने स्वभाव में पहुँचाने की एक क्रिया है।

विडम्बना यह है कि मनुष्य जैसे-जैसे सभ्य, शिक्षित और सम्पन्न हुआ है, ध्यान से दूर हुआ है। भौतिक सुख साधनों, शिक्षा और सम्पन्नता ने मनुष्य को दूसरों से जोड़ा है और खुद से दूर किया है। आज मनुष्य के मूल्यांकन का तरीका उपयोगिता है। आप अच्छे दुकानदार हैं, अच्छे नौकर हैं, अच्छे पति हैं, अच्छी पत्नी हैं, अच्छे पिता हैं, अच्छी माँ हैं, बस, बात समाप्त हो गई। यही आपकी उपयोगिता है। पर आनन्द वस्तु नहीं है जिसे पैसे से खरीद ले। जिसे आलमारी में सहेज कर रख लें। जिसे बैंक में जमा कर सके। यूटिलिटी को सर्वोपरी मान लेने वाले समाज को इसीलिए अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत सुख और अनंत शक्ति से कोई लेना-देना नहीं है।

जीवन में जो भी महत्वपूर्ण है वह समाज में आज गैरजरूरी है। उसकी बाजार में कोई कीमत नहीं है। प्रेम की कोई कीमत नहीं है। आनन्द की कोई कीमत नहीं है। प्रार्थना का कोई मूल्य नहीं है। ध्यान की कोई कीमत नहीं है, जबकि ध्यान हमारी जिन्दगी में उस डायमेंशन, उस आयाम की खोज है जहाँ हम बिना प्रयोजन सिर्फ होने मात्र से (Just to Be) से आनन्दित होते हैं।

तकनीक ने आराम के साजो- सामान बढ़ाए। रोजमर्रा का जीवन आसान हो गया पर इसकी कीमत हमने मन की शांति खोकर चुकाई है। आज हम पंखे/एसी की मदद से गर्मी से बच जाते हैं, हवाई जहाज हमें कुछ ही घंटों में दुनिया के किसी भी कोने में पहुँचा देते हैं, मोबाईल फोन से हर समय हम घर- दफ्तर से जुड़े रहते हैं पर मन नकारात्मक विचारों से भर गया है। डर, नफरत,ईर्ष्या, जलन और रोष हमारा स्वभाव हो गया है। यदि प्रसन्न रहना चाहते हैं तो इन So called joy Killers को कभी कभी दूर कर दें। सप्ताह में एक दिन मौन रहें। इस दौरान खुद से बात करेंगे तो अपने अंतर्मन को जानेंगे। अपने में समाहित सम्भावना को जानेंगे।

सम्भावना को वास्तविकता में बदलना आत्मोपलब्धि है। जिसे अंग्रेजी में Self Actualisation कहते हैं। आत्मोपलब्धि नहीं होने तक आपका होना निरर्थक है। धन, पद, पॉवर, प्रतिष्ठा मिल जाए तब भी उस कमी का अहसास होता है जिसके लिए आप जन्मे हैं। जिस पल आप में छुपी सम्भावना वास्तविकता में बदल जाती है उस पल जीवन शिखर पर पहुँच जाता है।

तीर्थंकर महावीर या तथागत बुद्ध की मूर्ति कमल के फूल पर बैठे हुए बनती है। यह पूर्ण खिला हुआ कमल उनकी आंतरिक सौन्दर्य का शिखर है। भीतर वे खिले हुए हैं। यही उन्हें प्रभामंडित करती है। महावीर जब चलते थे तो उनके चारों ओर चौबीस मील के दायरे में फूल खिल जाते थे। फूलों का मौसम न हो तो भी फूल खिल जाते थे। इसका आशय यह है कि भगवान महावीर के सम्पर्क में जो आता था, उनकी आभा को अनुभव करता था, वह महसूस करता था कि उसकी भेंट किसी दिव्य महामना से हो रही है। इसके पीछे महावीर के प्रति श्रद्धा या आस्था नहीं थी। पीछे थी- महावीर की आत्मोपलब्धि. इससे खिला आभामंडल।

बुद्ध के बारे में भी एक कथा है। एक बार काशी के राजा उनसे मिले तो बोले- आपके पास कुछ भी नहीं है, पर आप जिस ढंग से देखते हैं, बोलते हैं, चलते हैं या हंसते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है जैसे सारी पृथ्वी पर आपका राज्य है। मैं राजा हूँ पर आपके सामने खुद को भिखारी महसूस करता हूँ । आपकी इस ऊर्जा का स्रोत क्या है। बुद्ध ने कहा- वह मेरे भीतर है। मेरे पास स्वयं के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। मैं कुछ भी नहीं चाहता। मैं कामनारहित हो चुका हूँ।

महावीर या बुद्ध व्यक्ति हैं, पर महावीरत्व या बुद्धत्व व्यक्तिव नहीं है। महावीर या बुद्ध होने के लिए हमारा होना ही काफी है। महावीरत्व और बुद्धत्व हमारे भीतर है, केवल खोजना है। यह कठिन नहीं है, बिल्कुल आसान है। यह ऐसी छोटी सर्जरी है जिसके सर्जन भी आप है और ऑब्जेक्ट भी आप ही। आपको ही अपने पर यह सर्जरी करना है। इसका परिणाम क्या होगा? एक जन्मांध आदमी की सर्जरी होती है और वह देखने लगता है। दृष्टा उसमे मौजूद था, केवल खिड़की नहीं थी। आँख की सर्जरी हुई, तो खिड़की खुल गई। हमारी भी खिड़की बंद है। केवल एक सर्जरी करना है। इसके लिए बड़े प्रयत्न की भी जरूरत नहीं है। जहाँ सुई से काम

हो सकता है वहां हम तलवार चला रहे हैं। धन इकट्ठा कर रहे हैं, पद और प्रतिष्ठा के पीछे भाग रहे हैं। इसके बजाए ध्यान करें। जो एक छोटी सेल्फ सर्जरी है। खुद करना है। जिस अनंत आनन्द, अनंत ज्ञान और अनंत उर्जा को खोज रहे है वह अपने आप प्रकट हो जाएगी।

यह भी ध्यान रखें कि ध्यान धर्म नहीं, विज्ञान है। इसके लिए किसी कुरान, वेद, ग्रन्थ साहिब का पठन- पाठन करने की जरूरत नहीं है। प्रयोग करने का साहस पर्याप्त है। मुसलमान ध्यान करेगा तो कुरान के गहरे अर्थ समझने लगेगा। हिन्दू वेद को जानेगा। बौद्ध निर्वाण को समझेगा। जैन ध्यान करेगा तो कैवल्य को प्राप्त करेगा। ध्यान के लिए यह अप्रासंगिक है कि कहाँ पैदा हुए, क्या नाम मिला, क्या धर्म मिला। यह सब सामाजिक परम्परा और पहचान है। आप कोई भी हो ध्यान का सबको समान लाभ मिलता है। यह वैसा ही है, बीमार होने पर चिकित्सक उपचार करने या दवा देने के पहले यह नहीं पूछता कि हिन्दू हो या मुसलमान, जैन हो या बौद्ध?

जीवन के बीच जीवन थ्योरी के न्यूटन संस्थान (टीएनआई) के संस्थापक डॉ. माइकल न्यूटन की दो किताबें हैं- Journey of Souls और Destiny of Souls. इन पुस्तकों का सार है- देह हमारा वास्तविक घर नहीं है, हमारा घर कहीं और है। पुनर्जन्म की प्रक्रिया को डॉ. माइकल न्यूटन ने Past life regression (पूर्व जन्म की वापसी) और दो जन्मों के मध्य की स्थिति को "Life between life" (जीवन के बीच जीवन) कहा है।

ध्यान इस वास्तविक घर की खोज है. जीवन का अंतिम लक्ष्य मोक्ष का मार्ग है।

विडम्बना यह है आदमी, आदमी को खोजते खोजते दार्शनिक हो गया है। वैज्ञानिक हो गया। कलाकार हो गया लेकिन आदमी ने आदमी को नहीं पहचाना. बड़े बड़े पधारे। उनका बड़ों-बड़ों ने गुणगान किया। दोनों ही चले गए। दार्शनिक आए। चिंतक आए। सभ्यता आई। संस्कृतियाँ आई। वेद आए। उपनिषद आए। सबने आदमी की अनंत यात्रा को पहेली बना दिया। जीवन तो हमने जीने में ही खो दिया- Life has just lost in living.

कौन हैं हम? क्या हैं यह आत्मा? कहाँ से आए हैं? कहाँ जाना है?

ऐसे सवाल हमारे जेहन में गूंजते ही प्रारम्भ होती है ध्यान की यात्रा। इस आध्यात्मिक यात्रा में जरूरी है कि प्रश्न आत्मा की गहराइयों से पूछे जाएँ। जवाब प्रतिध्वनि बनकर सुनाई देने लगेंगे। महावीर हो या बुद्ध- उन्होंने कोई पद चिन्ह नहीं छोड़े हैं। उनकी तलाश में जो भी निकला है वह खुद से ही मिला है। अपने आप से रूबरू होना है तो ध्यान करें।

सुकरात समुद्र तट पर टहल रहे थे। उन्होंने वहां एक रोते हुए बालक को देखा। सुकरात ने बालक से पूछा - तुम क्यों रो रहे हो? बालक बोला-मैं अपने हाथ के प्याले में समुद्र भरना चाहता हूँ पर प्याले में समाता ही नही है। बालक की बात सुनकर सुकरात भी रोने लगे।

अब बालक की बारी थी। उसने पूछा- आप क्यों रो रहे हो? सुकरात ने जवाब दिया- तुम छोटे से प्याले में समुद्र भरना चाहते हो और मैं अपनी छोटी सी बुद्धि मे सारे संसार को भरना चाहता हूँ। आज तुमने मुझे सिखाया कि जिस तरह समुद्र प्याले में नहीं समा सकता, उसी तरह दुनिया मेरी समझ में नहीं समा सकती। मैं व्यर्थ ही मेहनत कर रहा था।

यह सुनकर उस बालक ने प्याले को दूर समुद्र में फेंक दिया और बोला- हे समुद्र, मेरे प्याले में तुम नहीं समा सकते पर मेरा प्याला तो तुम्हारे में समा सकता है। यह देखकर सुकरात बालक के पैरों में गिर पड़े और बोले- तुमने आज बहुत कीमती सूत्र मुझे दिया है।

हे परमात्मा, आप तो सारे के सारे मुझ में समा नहीं सकते पर मैं तो सारा का सारा आप में लीन हो सकता हूँ।

अध्याय - 3

कैसे करें ध्यान?

एक गुरु ने प्यास लगने पर अपने शिष्य से कहा- नदी से पानी ले आओ। शिष्य नदी किनारे पहुँचा तो उसने देखा कि नदी का पानी बहुत गंदा है। वह खाली हाथ लौट आया और गुरु से बोला- नदी का पानी साफ़ नहीं है इसलिए मैं पानी नहीं लाया। कुछ समय बाद गुरु ने शिष्य को फिर पानी लेने भेजा। अब नदी का पानी साफ़ हो चुका था। पानी पर तैरता सारा कूड़ा- कचरा नीचे बैठ चुका था। शिष्य पानी लेकर लौटा तो गुरु ने उसे समझाया- हमारे मन की भी यही स्थिति है। जीवन भर हम कूड़ा कचरा इकट्ठा करते है। अच्छे- बुरे अनुभव, रिश्ते, यादें हमारे मन को अशांत कर देते हैं। इससे हमारा स्वभाव बदल जाता है। शान्ति और धीरज से काम लेने पर मन में समाया कूड़ा कचरा नीचे बैठ जाता है।

ध्यान यही करता है, पर इसके लिए पहले हमारे आसपास का कूड़ा कचरा साफ़ करना पड़ता है। यही ध्यान की पूर्व तैयारी हैं।

ध्यान की तैयारी

स्थान- ध्यान के लिए ऐसा स्थान चयन करें जहां शांति हो। बाहर का शोरगुल सुनाई न दे। खुला हुआ और हरा-भरा स्थान उत्तम है।

मनोनुकूल माहौल आप अपने रूम में भी बना सकते है। ध्यान लगाने के लिए अगरबत्ती, विशेष संगीत और लोभान आवश्यक नहीं है। शोरगुल और दम घोंटू वातावरण से बचें। शांति तथा सुकून देने वाले वातावरण में रहें जहाँ मन न भटके। ध्यान साधना के कमरे या बैठक को साफ और व्यवस्थित कर लें। जहाँ

ध्यान करें वहाँ उमस और मच्छर न हो। ठंडक हो। प्रकृतिमय वातावरण हो, शुद्ध वायु हो। आस-पास का वातावरण व्यवस्थित होगा तो चित्त को व्यवस्थित रखना आसान हो जाएगा।

समय - ध्यान साधना के अभ्यास के लिए कौन सा समय सबसे उपयुक्त है?

यह व्यक्ति विशेष पर निर्भर करता है। कुछ लोग सुबह जागने के बाद तरोताज़ा और सचेत महसूस करते हैं। कुछ लोग सुबह के समय सुस्ती महसूस करते हैं। कुछ लोग सोने के समय तो कुछ लोग देर रात के समय अधिक सचेत होते हैं। यह व्यक्ति विशेष को तय करना चाहिए कि वह कब तरोताजा और सचेत है। सबसे उत्तम है प्रात:काल, ब्रह्ममुहूर्त का समय।

शुरुआत में सुबह जल्दी या देर रात के समय ध्यान साधना करें जब शोर अपेक्षाकृत कम होता है। जब हम इस दिशा में आगे बढ़ जाते हैं तो शोर हमें विचलित नहीं करता है, लेकिन शुरुआत में बाहर का कोलाहल हमारा ध्यान भंग कर सकता है। भोजन करने के बाद सामान्यत: थकान, सुस्ती और आलस्य महसूस होता है, इसलिए ध्यान साधना के लिए यह उपयुक्त समय नहीं है।

ध्यान यूं तो स्वभाव का हिस्सा होना चाहिए, लेकिन शुरुआत में इसके लिए एक निश्चित समय तय कर लें। कुछ दिनों के अभ्यास से यह दिनचर्या में शामिल हो जाएगा। ध्यान को स्वभाव बना लेने से पांच मिनट का ध्यान भी भरपूर लाभ देने लगता है। अल्पावधि का ध्यान आपके मस्तिष्क में बीज रूप ले ले तब समयावधि बढाएं। एक बैठक में कम से कम 20 मिनट या जितनी उम्र है उतने मिनट ध्यान करे। त्रिकाल ध्यान साधना- सुबह, दोपहर और शाम सबसे उत्तम है।

बैठक - ध्यान में आसन महत्व रखता है। ऐसा नर्म और मुलायम आसन ले जिस पर बैठकर आराम और सुकून का अनुभव हो। देर तक बैठे रहने पर भी थकान या अकड़न महसूस न हो। नए साधक या जिन्हें जरूरत हो वे भूमि पर नर्म आसन बिछाकर दीवार के सहारे पीठ टिकाकर भी बैठ सकते हैं। पीछे से सहारा देने वाली आराम कुर्सी पर बैठकर भी ध्यान कर सकते हैं।

ध्यान के लिए बैठने की भी ऐसी मुद्रा चुननी चाहिए जिससे पैरों के सुन्न हो जाने की समस्या न हो । उम्र बढने के साथ पालथी मार कर न बैठ पाएँ तो कुर्सी पर बैठने में कोई आपत्ति नहीं है, लेकिन बैठते समय पीठ सीधी रहनी चाहिए। ध्यान साधना के प्रारम्भ में यदि अपने पैरों को हिलाने की आवश्यकता महसूस होती है, तो ऐसा कर सकते हैं ।

महत्वपूर्ण यह है कि बैठने की मुद्रा आरामदेह होनी चाहिए। यदि आपको लगता है कि आपको कुर्सी पर बैठना चाहिए, तो वह भी ठीक है। यदि आप किसी विमान में हों या रेल में सफर कर रहे हों और पालथी मार कर बैठ पाना सम्भव न हो, तो आप अपनी सीट पर सामान्य स्थिति में बैठे हुए भी ध्यान साधना कर सकते हैं।

सभी आध्यात्मिक अभ्यासों में तनावमुक्त रहना महत्वपूर्ण है। खुद पर बहुत अधिक जोर न डालें। अपनी ध्यान साधना के प्रति सम्मान दर्शाना ही चाहिए।

मुद्रा- विभिन्न योग परंपरा में ध्यान के लिए अलग-अलग शारीरिक मुद्राओं का सुझाव दिया गया है। पद्मासन, वज्रासन और सिद्धासन में ध्यान सबसे ज्यादा चलन में है, पर कई लोग लेटकर और खड़े होकर भी ध्यान करते हैं। पद्मासन और सिद्धासन में हाथों का वर्तुल बनता है जिससे ऊर्जा का संचार होता है। इस मुद्रा में बैठने से धीरे-धीरे शरीर का भारीपन समाप्त हो जाता है। भोजन से उत्पन्न ऊर्जा या ओज को आभा में बदलने के लिए यह मुद्रा सर्वोत्तम है। ऊर्जा के संरक्षण से ध्यान में गति मिलती है।

पद्मासन में बैठकर दोनों हाथों की कोहनियों को घुटनों पर रखते हुए दोनों हाथों के अंगूठे के प्रथम पोर को तर्जनी अंगुली के प्रथम पोर से मिला दें अर्थात अंगूठे को तर्जनी (इंडेक्स) अंगुली से स्पर्श करते हुए शेष तीन अंगुलियों को सीधा तान दें। इसमें हाथों की आकृति ज्ञान मुद्रा जैसी बनती है। इसे ध्यान ज्ञान मुद्रा भी कहते हैं। बाएँ हाथ की हथेली पर दाएँ हाथ को रखकर जो ध्यान की मुद्रा बनती है उसे अमिट आभा या अमिताभ ध्यान मुद्रा कहते हैं। जिन्हें ध्यान में अधिक समय तक बैठना है उनके लिए यह ध्यान मुद्रा उचित है। भगवान बुद्ध व भगवान महावीर की मूर्ति इसी अवस्था में मिलती है।

ध्यान के अनुकूल शरीर- ध्यान के प्रति उत्सुकता का कारण है- ध्यान से मिलने वाली शांति और आनंद, लेकिन जब ध्यान करने की कोशिश करते हैं तो शरीर साथ नहीं देता। आमतौर से शरीर की जो आदतें होती हैं वे ध्यान के अनुकूल नहीं होती। ध्यान के लिए देर तक स्थिर होकर बैठना आवश्यक है।

हमारे शरीर की कुछ सुनिश्चित आदतें हैं। ध्यान हमारे शरीर की आदत नहीं है। शरीर के बंधे हुए एसोसिएशन हैं। शरीर की बंधी हुई आदतों को अगर कहीं से तोड़ दिया जाए तो नई आदत को पकड़ना आसान हो जाता है। शरीर एक यंत्र है। एक बायो कम्प्यूटर, जिसमें डाटा फीड करने पर वह सुचारु रूप से चलता है। यदि शरीर को नए ढंग से चलाना है तो उसका डाटा बदलना पड़ता है। ध्यान करने के लिए भी शरीर का डाटा बदलना पड़ता है यानि शरीर की आदतों को बदलना पड़ता है।

आहार- शरीर की जरूरत है- भोजन। इसकी पूर्ति जन्म लेते ही शुरू होती है और अंतिम साँस तक चलती है। माँ का दूध बच्चे का पहला भोजन है। वह भोजन सबसे प्रामाणिक है, क्योंकि उसमें स्वाद नहीं, स्वास्थ्य महत्वपूर्ण है। उसके बाद भोजन का केन्द्र शरीर की जरूरत से हटकर इन्द्रिय से जुड़ता है। भोजन का रूप, रस, गंध और स्वाद प्रभावशाली होते जाते हैं। मन हावी होता है तो शरीर की जरूरत पीछे हट जाती है।

ध्यान से लाभान्वित होना है तो हल्का भोजन ले। दरअसल हम जितना खाते हैं, उसमें से आधा हमारे पेट भरने के लिए होता है और आधा जेब काटने के लिए। जरूरत से ज्यादा खाने से या गलत खाने से शरीर में बेवजह बीमारियां होती हैं और चिकित्सा पर खर्च होता है। भोजन जितना कम लेंगे उतना ध्यान की गति तीव्र और सुगम होगी।

इन्द्रियों को विश्राम- आधुनिक जीवन इंद्रियों पर बहुत बोझ डालता है। तनिक सोचिए, हम कितने घंटे आंखों का उपयोग करते हैं? हम कितना बोलते हैं? कितनी अनावश्यक आवाजें सुनते हैं और कितना अनावश्यक खाते हैं? क्या देर तक टीवी देखना या कम्प्यूटर के साथ बैठना जरूरी है? नेत्र बेहद नाजुक इन्द्रिय है। वह कितना बोझ ढो रही है। मन के अधिकतम तनाव आंखों से प्रवेश करते हैं और

आंख का तनाव ही मन के स्नायुओं के लिए तनाव का सबसे बड़ा कारण है। अगर आंख शांत, शिथिल और रिलेक्स हो जाए तो मस्तिष्क के निन्यानवे रोग न हों। कान में आइपॉड या मोबाइल लगाना चित्त को उत्तेजित करना है। इन्द्रियों को थोड़ा विश्राम दें। हम जितना बोलते हैं उसमें आधे से अधिक अनावश्यक है।

शरीरमाध्यम खलु धर्म साधनम यानी शरीर से ही जीवन के सारे धर्म और कर्तव्यों का निर्वहन होता है। शरीर स्वस्थ नहीं है तो धर्म, अर्थ और मोक्ष सब बेकार हैं। जब आप इंद्रियों के बारे में सजग हो जाएंगे तो आपका मन आपको सावधान करने लगेगा। मनोविज्ञान कहता है कि अच्छे विचारों के साथ भोजन करने से शरीर पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। भोजन करते समय यह सोचें कि आप अमृत ग्रहण कर रहे है और अंदर अमृत प्रवेश कर रहा है।

श्वास- अधिकांश ध्यान पद्धतियाँ श्वास केन्द्रित हैं। श्वास पर ध्यान साधते समय सामान्य ढंग से श्वास लें। न बहुत तेज़, न बहुत धीरे। न बहुत गहरा, और न ही बहुत हल्का। सिफर् नाक से सामान्य ढंग से श्वास लीजिए।

श्वास को साधते समय दो स्थानों पर ध्यान दे। एक, नासिका के अन्दर जाते और बाहर निकलते श्वास की अनुभूति। दूसरे, श्वास-प्राश्वस के कारण पेट के फूलने और सिमटने की अनुभूति। यदि आपका चित्त बहुत अधिक भटक रहा हो जिसे अंग्रेज़ी में Spaced out कहते हैं। या कल्पना की उड़ान भर रहा हो, तो पेट के नाभि के आस-पास के हिस्से पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। यदि आपको बहुत नींद या थकान अनुभव हो रही है तो नासिका के भीतर जाते और उससे बाहर आते श्वास पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए।

श्वास चाहे हम नथुनों पर केन्द्रित करें या पेट पर, यह ध्यान भटकने से रोकता है। कुछ अस्पतालों में, विशेष तौर पर अमेरिका में दर्द को नियंत्रित करने के लिए श्वास सम्बंधी ध्यान साधना को अपनाया जाता है। जब कोई बच्चा रोता है और उसकी माँ उसे सीने से लगा लेती है तो बच्चे को माँ के श्वास-प्राश्वसकी अनुभूति होती है। बच्चे का ढाढस बँधता है। इसी प्रकार यदि हम अपने श्वास पर ध्यान केन्द्रित करें, विशेष तौर पर जब हम बहुत दर्द में हों तो हमें शांति मिलती है। श्वास की साधना

सिर्फ शारीरिक दर्द कम नहीं करती बल्कि भावनात्मक पीड़ा से भी राहत प्रदान करती है।

हम भूल जाते हैं कि हमें बाहर और अंदर से मौन होना है। उस समय ऐसा करना कठिन हो जाता है जब किसी विचार के साथ कोई अशांत करने वाली भावना जुड़ी हो। जैसे जब हम किसी ऐसे व्यक्ति के बारे में सोच रहे हों जिसके साथ हमारा गहरा लगाव हो, या कोई ऐसा व्यक्ति जिस पर हम बहुत क्रोधित हो तो भटके हुए ध्यान को एकाग्र करना और भी कठिन हो जाता है। ऐसे समय अनवरत चलने वाले श्वास को दृष्टा भाव से आलम्बन बनाएँ। ध्यान को श्वास पर मोड़ कर हम अंदर बाहर से मौन हो सकते हैं।

मुख्य मुद्दा यह है कि सचेतन मन से श्वास पर ध्यान करें। आपको सुस्ती महसूस हो या नींद आने लगे, तो आप अपने आप को सचेत कर सकें। प्रारंभ में सिद्धासन में बैठकर आंखें बंद कर लें और दाएं हाथ को दाएं घुटने पर तथा बाएं हाथ को बाएं घुटने पर रखकर, रीढ़ सीधी रखते हुए गहरी श्वांस लें और छोड़ें। सिर्फ पांच मिनट श्वांसों के इस आवागमन पर ध्यान दें कि श्वांस भीतर कहां तक जाती है और फिर श्वांस बाहर कहां तक आती है। श्वांस पूर्णत: भीतर कर मौन का मजा लें। मौन से ही व्यक्ति में दृष्टा भाव का उदय होता है। सोचना शरीर की व्यर्थ क्रिया है और बोध मन का स्वभाव।

विचार- योगसूत्र के अनुसार विचार विकार है। वर्तमान में जीने से ही जागरूकता जन्म लेती है। भविष्य की कल्पनाओं और अतीत के सुख- दु:ख में जीना ध्यान में बाधा है।

जब आंखें बंद करके बैठते हैं तो जमाने भर के विचार आने लगते हैं। अतीत की बातें या भविष्य की योजनाएँ, कल्पनाएँ आदि मक्खियों की तरह मस्तिष्क के आसपास भिनभिनाने लगती हैं। विचारों को साक्षी भाव से देखेंगे तो विचार शांत होने लगेंगे। आप शून्य की ओर बढ़ेंगे। ध्यान विचारों की मृत्यु है। निर्विचार होने की कोशिश करें। सतत ध्यान करने पर ऐसा होगा तब ही सही मायने में ध्यान घटित होगा।

अभ्यास- हर चीज़ में उतार-चढ़ाव आते रहते हैं। किसी दिन ध्यान साधना बहुत सफल होगी तो किसी दिन नहीं। ऐसा भी नहीं होगा कि ध्यान साधना हर दिन के साथ बेहतर से बेहतर होती चली जाए। महत्वपूर्ण यह है कि दृढ़प्रतिज्ञ रहते हुए अभ्यास जारी रखें। हर दिन ध्यान लगाएँ। प्रारम्भ में कुछ देर विश्राम करें, फिर कुछ और मिनटों तक अभ्यास करें। फिर विश्राम करें, फिर कुछ मिनटों तक अभ्यास करें। ऐसे अभ्यास से ध्यान की अवधि बढाई जा सकती है। ध्यान साधना का उद्देश्य स्वर्ण पदक जीतना नहीं है। उद्देश्य यह है कि हम ध्यान साधना से विकसित कौशल को अपने व्यवहार का हिस्सा बना ले। ध्यान साधना में जागरूकता बहुत जरूरी है।

आप रोज उठते हैं, स्नान इत्यादि करते हैं, खाते-पीते हैं, काम करते हैं। इस पूरी दिनचर्या में अगर ध्यान को शामिल कर लेंगे तो जीवन खिल उठेगा। ध्यान यानी अवेयरनेस, हर कृत्य को एक आभा देगा। छोटा-सा कृत्य भी सजगता के रंग बिखेरने लगेगा। लेकिन सिर्फ लिखने-पढने़ से, बैठे-बैठे सोचने से ऐसा नहीं होगा। जैसे भोजन के बारे में सोचने मात्र से पेट नहीं भरता, वैसे ही ध्यान के बारे में सिर्फ सोचने से होश नहीं जागता। ध्यान से होश में आने का मतलब या मकसद है देह के द्वार खोलना। उस आत्म ज्योति को पहचान लेना जो आपके भीतर जल रही है। ध्यान करें और देह की सीढियों से उतरकर हृदय तक पहुँचे। हृदय की सीढियों से उतरेंगे तब मिलेगी वह आत्म ज्योति, जिसके बिना सब कुछ है, पर जीवन उदास है। इस उदासी से मुक्त होकर परमानन्द की अवस्था में जीना है तो ध्यान करें।

श्री आदिनाथ

अध्याय - 4

आत्मरंजन है ध्यान!

दुनिया में दो तरह के लोग हैं। एक जिनका जीवन मनोरंजन बन चुका है और दुसरे वे जो आत्मरंजन कर रहे हैं। जिन लोगों के लिए मनोरंजन ही जीवन है उनकी दिनचर्या में शामिल है- टीवी देखना, घूमना फिरना, नाचना- गाना। दूसरे वे लोग है जो ध्यान करते हैं। इनकी संख्या बहुत कम है पर इन्होंने अपनी जड़ों को जान लिया है, मजबूत कर लिया है। इनके आसपास वास्तविक ख़ुशी है। इनका आचार विचार और व्यवहार बदल गया है। जिन्दगी की यांत्रिक खुशियों के बजाए ये वास्तविक आनंद को प्राप्त कर चुके हैं। ये जिदगी का हर पल जीते हैं।

आज हम जिस दौर में जी रहे हैं वहां तनाव का कारण और स्तर दोनों ही बहुत ज्यादा है। जीवन में आराम कम और भागदौड़ ज्यादा है। दूसरों से आगे बढने की होड़ मची हुई है। भागमभाग में सोचने का समय नहीं है। मनोरंजन को ही हमने ख़ुशी मान लिया है, जबकि जिस सच्ची ख़ुशी, शांति व आनंद की जरूरत है वह आत्मरंजन से मिलती है। लोग सम्पन्न हैं। बड़े-बड़े घर हैं, बड़ी-बड़ी गाडियाँ हैं, घर में नौकर- चाकर हैं, पर सुबह का नाश्ता आफिस जाते समय गाड़ी के अंदर हो रहा है। जो खुद गाड़ी ड्राइव करते हैं वे तो एक रेड लाईट पर एक कौर खाते है और अगले कौर के लिए अगली रेड लाईट का इंतजार करते हैं। इस रफ्तार से जिन्दगी जीनेवाले कैसे वास्तविक ख़ुशी और आनंद की कामना कर सकते हैं?

आइए, एक कहानी से समझें कि कैसे जीएं...

आकाश बादलों से घिरने लगा था। दो भिक्षु, एक जवान और दूसरा बूढ़ा अपने झोपड़े की तरफ भागे जा रहे थे। बरसात शुरू होने के पहले वे वहाँ पहुँचना चाहते

थे। बरसात के चार महीने वे झोपड़े में ही रहते थे। आठ महीने वे भ्रमण करते थे। भिक्षा मांगकर अपना पेट भरते, पर जहाँ रहते, वहाँ जीवन बांटते। अंधेरे रास्तों में दीया जला देते। मंदिरों में भजन करते। शमशान की सफाई कर देते। आठ महीने घूमते रहने के बाद बरसात के चार महीने के लिए अपने झोपड़े में लौट आते थे। जंगल में उगने वाले फलों से जीवन-यापन करते थे।

बरसात शुरू होने ही वाली है, यह सोचकर वे भागे जा रहे थे। युवा भिक्षु आगे था, बूढ़ा भिक्षु पीछे। जवान भिक्षु को पहाड़ी के पास अपना झोपड़ा दिखाई दिया। उसने देखा हवाओं ने झोपड़ा ध्वस्त कर दिया है। आधी छत उड़ गई थी। गरीब के झोपड़े में इतना बल नहीं होता कि वह आंधी-तूफान का सामना कर सके। युवा भिक्षु अपने झोपड़े की दुर्दशा देखकर क्रोध से भर गया। उसने बूढ़े भिक्षु से कहा- 'देख रहे हो! जिस भगवान के हम गुणगान करते हैं, वह हमारी इतनी फिकर भी नहीं कर सकता। ऐसी बातों से ही भगवान पर से विश्वास उठ जाता है। लगता है भगवान है ही नहीं। पापियों के महल खड़े हैं, गरीबों के झोपड़े उड़ गए हैं। अब तुम भजो भगवान को, मुझे तो छुट्टी दे दो। वर्षा सिर पर है, आकाश में बादल घिर गए हैं, बिजली चमक रही है, क्या होगा?'

युवा भिक्षु इतना गुस्से में था कि उसने यह भी ध्यान नहीं दिया कि बूढ़ा भिक्षु आकाश की ओर हाथ जोड़े बैठा है। उसकी आंखों से आंसू बह रहे हैं। न मालूम किस आनंद का झरना बह रहा है उसकी आंखों से। युवा भिक्षु ने उसे हिलाया और कहा- 'क्या करते हो?' लेकिन वह बूढ़ा भिक्षु भगवान से प्रार्थना करता रहा- 'हे प्रभु, तेरी कृपा अनूठी है। हवाओं का क्या भरोसा, पूरा झोपड़ा भी उड़ा सकती थी। आधा झोपड़ा तूने ही बचाया।

युवा भिक्षु ने देखा कि बूढ़े भिक्षु के चेहरे पर रोशनी झलक रही है। वह कह रहा है- 'धन्यवाद भगवान, आधे झोपड़े से हमारा काम चल जाएगा। बूढ़ा भिक्षु आनंदमग्न उस झोपड़े में ऐसे घुसा जैसे किसी महल में जा रहा है।

रात हुई, वे दोनों सो गए। जवान भिक्षु रातभर करवटें लेता रहा। ऐसा ही होता है। जब हम क्रोधित होते हैं तो चैन खो जाता है। बरसात होने लगी तो उसका गुस्सा और बेचैनी और बढ़ गई। वह बोला- 'मैं अपनी सारी प्रार्थना वापस लेता हूं। अब

मैं कभी भगवान के गुणगान नहीं करूंगा। वह तो निर्दयी है। गरीबों का पालनहार नहीं है। लेकिन बूढ़ा भिक्षु गहरी नींद में ऐसे सोया हुआ था, जैसे समाधि में हो। बिजली चमकती तो उसका चेहरा दमकता था।

सुबह दोनों उठे। एक रातभर सोया नहीं था। दूसरे ने गहरी नींद में सपने देखे थे। युवा भिक्षु ने उठते ही भगवान को फिर से कोसना शुरू किया, पर बूढ़ा भिक्षु प्रार्थना करने लगा- 'हे परमात्मा, तुम कितने दयालु हो। हमें पता भी नहीं था कि आधे छप्पर में सोने का आनंद क्या है? कल रात तेरी प्रकृति का अद्भुत रूप मैंने देखा। कभी नहाते हुए, कभी खिलखिलाते हुए बादलों के बीच झिलमिलाते सितारे। कैसा मनोरम दृश्य था। अब तो रोज ऐसा मजा आएगा। आधे छप्पर में हम सोए होंगे और आधे में प्रकृति नृत्य करेगी। अगर हमें पता होता कि आधे छप्पर में रहना इतना आनंदमय है तो हम ही तोड़ देते।'

बूढ़े भिक्षु का सोच एक धार्मिक व्यक्ति का जीवन के प्रति दृष्टिकोण है। न तो मंदिर, न मस्जिद, न गुरुद्वारा, न चर्च हमें धार्मिक बनाते हैं। णमोकार मंत्र जपने, भजन-कीर्तन करने, नमाज पढने, गीता पढने से हम धार्मिक नहीं होते। धार्मिक व्यक्ति तो वह है जो अनुकूल और प्रतिकूल स्थिति में समानुभूति (Empathy) में जीए। झोपड़ा ध्वस्त हो जाए, पर खुश रहे, भगवान को धन्यवाद दें। समानुभूति की गहराई में गोता लग गया तो संसार पागल नजर आएगा। सोचने लगेंगे कि लोग बेकार ही छोटी-छोटी बातों से खुश हो रहे हैं। छोटे-छोटे दुःख में दुःखी हो रहे हैं। भगवान और भाग्य को कोस रहे हैं। वैसे ही जैसे एक भिक्षु ध्वस्त झोपड़ा देखकर अपनी गरीबी और अपनी दरिद्री को कोस रहा है। वह यह नहीं देख पा रहा है कि आधा झोपड़ा बच गया है। अपने मन में समानुभूति के सोच की एंट्री उसने बंद कर रखी है। इसके विपरीत.. बूढ़ा भिक्षु.. यानी समानुभूति के साथ जिंदगी जीने वाले लोग.. अच्छे दिनों में इतराते नहीं और बुरे दिनों में घबराते नहीं। मन में वेदना व करुणा हो, सहानुभूति नहीं समानुभूति हो, राग-द्वेष मिट जाए यही सही मायने में धार्मिक होना है।

आत्म ध्यान के अन्वेषक जैनाचार्य डॉ. शिव मुनि कहते हैं- सहानुभूति नहीं समानुभूति (Empathy not sympathy) ही जैन दर्शन है। यही भगवान महावीर की साधना का मूलाधार था। यही आत्म ध्यान है।

आइए, इस पुस्तक के दुसरे खंड में प्रवेश करें और जानें क्या है आत्म ध्यान, कैसे करें यह ध्यान और बनाएँ अपने जीवन को सहज और सरल...

खंड - 2 | अध्याय - 1

आत्म ज्ञान है आत्म ध्यान

बचपन याद करें। कितने सुहाने दिन थे। दुनिया की हर चीज़ विस्मित करती थी। फूलों पर मंडराती रंग-बिरंगी तितलियाँ, आकाश में विचरते- बरसते मेघ। आकाश में इंद्रधनुष, घने बादलों के पीछे से आहिस्ता से झाँकता सूरज। रात हुई तो आकाश में झिलमिलाते अनगिनत तारे! बचपन में जो सम्मोहक था वह सब आज भी है पर हम बदल गए हैं। उम्र बढने के साथ हमारी संवेदना मर गई है। अब पक्षियों का कलरव उमंग-तरंग पैदा नहीं करता, शोर लगता है। फूल खिलते हैं पर उनकी सुन्दरता नहीं लुभाती। क्यों?

क्योंकि हम सभ्य हो गए हैं? निसर्ग से दूर घर और कार्यालय की एयरकंडीशनिंग के साथ कंडीशन्ड (संस्कारित) हो गए हैं। अब बच्चे भी पैदा होते हैं तो वातानुकूलित कमरों में और यह शुरुआत ज़िंदगीभर बनी रहती है। ज़िंदगी कृत्रिमता में विकसित होती है। यह आज की सभ्यता का विकास है। इस सभ्यता में बड़ा हुआ व्यक्ति जीवन के खुलेपन को जीना भूल गया है। खुलापन तो उसे डराता है। वह अपनी चारदीवारी के बंद दरवाजों में खुद को महफूज पाता है। निंरतर सिकुड़ रहा है। वह पहले के मनुष्य से अधिक स्वस्थ और सुंदर दिखता है, क्योंकि उसके पास अच्छा भोजन है, दवाएं हैं, मल्टी विटामिन हैं, पोषक सामग्री है और सौन्दर्य प्रसाधन है। लेकिन जीवन की नैसर्गिकता और जीवन का संस्पर्श मर गया है।

बनार्ड शॉ ने शायद इसलिए कहा है कि मैं ऐसी सभ्यता का क्या करूं जिसमें प्रतिबंध ही प्रतिबंध है। कभी समाज का, कभी धन का, कभी पद का, कभी इस

बात का कि लोग क्या कहेंगे? मेरे से अच्छे तो वे आदिवासी लोग हैं जिनके पास नैसर्गिक समृद्धि है।

सही कहा है बनार्ड शॉ ने। जिनके पास कृत्रिम समृद्धि है उनका फोन सदा बजता रहता है। जबकि एक आदिवासी किसी घने पेड़ के नीचे बाँसुरी बजाता है। उसके पास समय ही समय है। वह रूखी-सूखी रोटी खाकर तृप्त हो जाता है। समृद्ध व्यक्ति को पांच-सितारा होटलों में सुस्वादु पकवान उपलब्ध हैं, पर चिकित्सक ने छूने से भी मना कर रखा है। तकनीक, संसाधन, सम्पदा, सुख- सुविधा के मामले में मनुष्य कभी इतना शक्तिशाली नहीं रहा जितना की इक्कीसवीं सदी में। विडम्बना यह है कि आत्मिक रूप से मनुष्य जितना कमजोर इस सदी में हुआ है उतना कमजोर कभी नहीं रहा।

ये दो अतियाँ हैं- एक सभ्यता व समृद्धि की और दूसरी नैसर्गिकता व दरिद्रता की, यही जीवन में उलझनें पैदा करती हैं।

हम भूल गए हैं कि हमारी इंद्रियों का एक आयाम और है जो भीतर जाता है। प्रत्येक इंद्रिय दोहरी है। आँख बाहर ही नहीं देखती, भीतर भी देख सकती हैं। कान बाहर ही नहीं सुनते, भीतर भी सुन सकते हैं और जब भीतर की इंद्रियाँ सजग होती है तो बाहर और भीतर की समृद्धि के संगम से परम समृद्धि जन्म लेती है। यही पाना आत्म ध्यान का लक्ष्य है।

आत्मा और ध्यान दो शब्दों की संधि (योग/जोड़) है- आत्म ध्यान। ध्यान साधना से अनजान और अनभिज्ञ व्यक्ति भी दैनिक जीवन में ध्यान शब्द का प्रयोग करते हैं। वे कहते हैं- ध्यान से पढो, ध्यान से सुनो या ध्यान देकर काम करो। इन सबका आशय है एकाग्रचित्त हो जाओ। पर एकाग्रचित्त हो जाना ही ध्यान होता तो ध्यान करना बहुत आसान हो जाता। जिस चीज में रस आता वह करते और मन एकाग्र हो जाता।

अपने आसपास देखिए... ऐसे लोग मिल जाएँगे जिन्हें संगीत सुनने में मजा आता है। वे संगीत सभा में भारी भीड़ के बीच मंत्रमुग्ध होकर संगीत सुनते हैं। ऐसे लोग भी हैं जिन्हें पुस्तक पढना अच्छा लगता है। वे पुस्तक पढ़ते समय भूल जाते हैं कि

उनके आसपास क्या हो रहा है? जिन बच्चों को वीडिओ गेम्स की लत लग जाती है, उन्हें माँ पुकारती है पर सुनाई नहीं देता। मनचाहे काम में डूब जाना एकाग्रता है, लेकिन यह ध्यान नहीं है- Meditation is not concentration.

एकाग्रता ध्यान का एक पड़ाव है। आत्म ध्यान तो इसके भी आगे की अनंत यात्रा है जिसका मूलाधार है भगवान महावीर का कथन-

जे एगं जाणइ से सव्वं जाणइ

(जिसने एक को जान लिया उसने सबको जान लिया)

जैन दर्शन कहता है- आत्मा का स्वरूप परमात्मा स्वरूप से भिन्न नहीं है, पर यह परमात्मा भी नहीं है। आत्मा का अपना स्वतंत्र अस्तित्व है। कर्म से मुक्त होने पर हर आत्मा में परमात्मा बनने की शक्ति और सामथ्र्य है।

तदनुसार अतीत की याद, भविष्य की कल्पना (आशंका) और वर्तमान के प्रति आसक्ति से विवेकपूर्ण मुक्ति है- आत्म ध्यान। मन की क्रिया और प्रतिक्रिया शून्य हो जाना आत्म ध्यान है। राग-द्वेष से परे अज्ञात में प्रवेश है- आत्म ध्यान। उस शुद्ध अवस्था की प्राप्ति और अपने स्वरूप का बोध है जिसे जैन दर्शन परमात्मा में रूपांतरण कहता है।

देखो अपने आपको, जानो अपने आप।

अपने को जाने बिना, मिटे न भव संताप॥

व्यक्ति दु:खी क्यों होता है? क्योंकि वह वास्तविकता को सहजता से स्वीकार नहीं करता है। वह उसे बदलने, मन के अनुरूप ढालने की कोशिश करता है। जीवन की सत्यता को अस्वीकार करता है। इसके विपरीत आत्म ध्यान सत्य की साधना है। सत्य की खोज है। सत्य की स्वीकारोक्ति है। जिस क्षण का जो सत्य है उसे जैसा है वैसा ही देखना, जानना और मानना ही नहीं बल्कि उसको स्वीकार करने की साधना है- आत्म ध्यान।

ध्यान आत्मनिर्भरता और आत्मपरीक्षण है तो आत्म ध्यान इस निर्भरता और परीक्षण के साथ अंतर्मन में जमा हो चुके मैल की भी सफाई है।

हमारा मन घड़ी के पेंडुलम की तरह है। कभी मिथ्या सुख की ओर तो कभी मिथ्या दुःख की ओर। इससे परे की अनुभूति है- समता भाव। जैसे सुख में, वैसे ही दुःख में...इस समता भाव के अभाव के कारण प्रत्येक व्यक्ति, वस्तु या विचार के प्रति दो प्रकार का व्यवहार करते हैं। या तो अच्छा मानकर स्वीकार कर लेते हैं या बुरा मानकर अस्वीकार कर देते हैं। आत्म ध्यान व्यक्ति को वस्तु या विचार को द्दष्टा बनकर देखना सिखाता है। वैसे ही जैसे आइने में प्रतिबिम्ब आता है और चला जाता है, आइना उसे याद नहीं रखता। व्यक्ति, विचार या वस्तु के साथ हमारा व्यवहार आइने की तरह हो जाए तो जीवन आनन्दित हो जाए। आत्म ध्यान समत्व की यह साधना सिखाता है। सच्चे सुख की खोज कर अनंत सुख से जोड़ता है जो हमारे निज आत्म तत्व में समाया है।

आध्यात्मिक साधना किसी भी विचार धारा की हो, ध्यान पद्धति कोई भी हो, सबका उद्देश्य है- हम कैसे निर्मल बनें? कैसे सूर्य के समान प्रकाशित हों? कैसे सागर के समान गम्भीर हों, कैसे मोक्ष प्राप्त करें?

भगवान महावीर की ध्यान साधना और उनकी तपस्या पर आधारित आत्म ध्यान के अनुसार कैवल्य (मोक्ष, निर्वाण या समाधि) की सम्भावना हमारे भीतर विद्यमान है। हमारे भीतर शिवत्व है, महावीरत्व है, बुद्धत्व है किन्तु बीज रूप में है। अविकसित है। इन बीजों को, इन सम्भावनाओं को विकसित करने की साधना ही आत्म ध्यान है।

आत्म ध्यान का साधक अपने व्यक्तित्व को अपने भीतर वैसे ही समाहित कर लेता है जैसे कछुआ अपने अंगो को खोल में छुपा लेता है। आत्म ध्यान करने पर सत्य बोलना सहज हो जाता है तो सत्य को स्वीकार करने की शक्ति भी बढ़ जाती है। हम बच्चों को कहते हैं- सत्य बोलना चाहिए किन्तु यह नहीं सिखाते कि सत्य बोलने के लिए अपने मन को कैसे तैयार करें? यदि बच्चों को आत्म ध्यान करना सीखा दें तो यह नही सिखाना पड़ेगा कि सत्य बोलो। वे ध्यान करेंगे तो अपनी शक्ति खुद

नियंत्रित करने लगेंगे। एकाग्रता बढ़ जाएगी तो बुद्धि प्रखर होगी। वे विनम्र हो जाएँगे। आप कहेंगे बच्चों से ध्यान करवाना मुश्किल है।

जी नहीं, सहज और आसान है। एक प्रयोग करें। सुबह एक घंटा पूरा घर मौन हो जाए। मोबाइल, टीवी, रेडियो ही नहीं कॉल बेल भी ऑफ कर दें। बिना बोले सब अपनी अपनी दिनचर्या जारी रखें। यह मौन ध्यान की Entrance Test है। एक महीने यह प्रयोग करने के बाद पूरा परिवार एक साथ 10-15 मिनट ध्यान करें। हो सकता है जो बड़ों के लिए ध्यान होगा वह बच्चों के लिए मौन। पर पता भी नहीं चलेगा और यह मौन उनके लिए भी ध्यान बन जाएगा। संस्कार में तब्दील होकर उनका स्वभाव बन जाएगा।

विडम्बना यह है कि आज मनुष्य अपनी स्वाभाविक चाल छोड़कर यंत्रों के साथ यंत्र की तरह दौड़ रहा है। यह भाग दौड़ और व्यस्तता उसे मानसिक रोगों का शिकार बना रही है। तनाव, क्रोध,ईर्ष्या और मान- अपमान के कारण युवा अनिद्रा, रक्तचाप, मधुमेह, हृदय रोग, पीठ- कमर- गर्दन में दर्द, माइग्रेन, कब्जियत आदि से हैरान- परेशान है। दवा से दिन शुरू होता है और दवा से दिन का समापन। अमेरिका में हुई एक रिसर्च के अनुसार मनोविकार बढ़ रहे हैं।

इस मनोविकार का स्थायी उपचार है आत्म ध्यान। इससे तन और मन दोनों को विश्राम व विराम मिलता है। प्रकारांतर में आत्म ध्यान विश्राम ही है। नींद की गोलियों से व्यक्ति संवेदन शून्य होकर विश्राम करता है पर ध्यान से स्वाभाविक अवस्था में सोता- उठता और काम करता है। व्यसन से भी मुक्ति दिलवाता है आत्म ध्यान। आत्म ध्यान कठिन अवश्य है, असम्भव नहीं। कष्ट साध्य है, असाध्य नहीं। आत्म ध्यान करते समय आपका मन आपको सबसे ज्यादा परेशान करेगा। मन कहेगा व्यर्थ समय बर्बाद कर रहे हो। ये सब मन के विचार है, मन की धारणाएँ हैं। आप अपने भीतर इस भाव को मजबूत करें कि मैं शुद्ध आत्मा हूँ, अजर हूँ, अमर हूँ, सिद्ध हूँ, निरंजन हूँ, अविनाशी हूँ। मन की भूलों के कारण मेरी आत्मा जन्म-मरण के चक्रव्यूह में फँसी हुई है। मैं शरीर के समस्त आकर्षणों को तोड़ डालूँगा। मन की किसी भी वासना के पराधीन नहीं रहूँगा। मेरे लिए अब मेरी आत्मा महत्वपूर्ण है, मन नहीं। कोई सम्मान करे या अपमान करे, जीवन रहे या नहीं, कोई

चिंता नहीं। ये सब मान- सम्मान और सुख सुविधा शरीर के लिए है। आत्मा इन सबसे मुक्त है। वह शुद्ध और निरंजन है। समस्त भावों, प्रभावों और विभावों से स्वतंत्र है। कवि बनारसीदास ने कहा है-

भेद ज्ञान साबुन भयो, समता रस भर नीर।

अंतर धोबी आत्मा, धोवे निज गुण चीर॥

आशय है आत्मा पर जो अशुद्धि की परतें आ गई है, कर्मों का जो धुल- धुंआ जम गया है उसे अपनी आत्मा के ही भेद-ज्ञान और समता के साबुन से शुद्ध करना है। इस अशुद्धि के नीचे परम शुद्ध आत्मा का निवास है। अनन्त आनन्द, अनन्त ज्ञान और अनन्त दर्शन की त्रिवेणी प्रवाहित हो रही है। आवरणों को हटाना भर है।

यह आवरण हैं आप खुद...

आपसे कोई पूछे कि आप कौन है तो आप अपना नाम बताएँगे। आपके माता पिता ने आपको एक नाम दिया और आप वह हो गए। पर जब आपका जन्म हुआ तब आपका कोई नाम नहीं था, पर आप थे। जब आप माँ की कोख में थे, तब भी आप थे, पर नाम नहीं था। स्पष्ट है कि आप केवल 'नाम' नहीं है। आप पर नाम की मुहर लगा दी गई है। आप कहते हैं कि मैं अमुक व्यक्ति का पुत्र हूँ। लेकिन किसी का पुत्र होना, आप होना नहीं है। आप जन्मे तब इन्सान थे। आप बड़े हुए तो आपसे कहा गया- हिन्दू हो, मुसलमान हो, जैन हो या सिख हो। आप वह हो गए। ना तो आपसे पूछा गया और ना ही आपको धर्म का मतलब समझाया गया। आप होश में आते इसके पहले ही एक मुखौटा लगा दिया। यह नाम, यह धर्म आपकी नेम प्लेट बन गया। आपकी पहचान बन गया। डाकिया आपके नाम की डाक वहां डिलीवर करने लगा पर वास्तव में जहाँ से आप आए हो वहां आपका यह नाम या पता (धर्म) नहीं है। वहां से यदि कोई डाक आई तो आपको कैसे मिलेगी?

आप कौन है इस सवाल के जवाब में आप यह भी कह सकते हैं कि मैं मनुष्य हूँ। हम भारतीय पुनर्जन्म में विश्वास करते है। तदनुसार इस जन्म में आप मनुष्य है

तो यह इस जन्म का सच है। पिछले जन्म में आप क्या थे? पुरुष या स्त्री ? किस देह में थे? देव, मनुष्य, पशु या पक्षी? इसी तरह देहान्तर होगा तो अगले जन्म में क्या होंगे?

स्पष्ट है कि आप एक 'नाम' नहीं हैं! आप किसी के 'पुत्र' नहीं है! आपका कोई धर्म नहीं है! आप 'शरीर' भी नहीं हैं... तो फिर क्या हैं आप?

आप एक आत्मा हैं। चिन्मय आत्मा। वह आत्मा जो कभी मरती नहीं है, जो कभी जन्म नहीं लेती। वह आत्मा जो सदा शाश्वत है. चिर नूतन है। अनंत ज्ञान, अनंत आनन्द और अनंत शक्ति रुपा है। यह इस ब्रम्हांड का सर्वश्रेष्ठ तत्व है।

भगवान महावीर से पूछा गया था कि आत्मा कैसी है? उन्होंने कहा -

आत्मा वर्णनातीत है। आत्मा का वर्णन करते समय सारे शब्द समाप्त हो जाते हैं। यहाँ बुद्धि काम नहीं आती, क्योंकि आत्मा अमूर्त है, उसका कोई वर्ण नहीं है, गंध नहीं है, रस नहीं है, स्पर्श नहीं है। आत्मा न दीर्घ है, न ह्रस्व है, न वृत्ताकार है, न त्रिकोण है, न चौरस है और न ही मंडलाकार है। आत्मा न स्त्री है, न पुरुष है और न ही नपुंसक है। आत्मा अरुपी (निराकार) सत्ता है।

उपनिषदों में भी कहा गया है- 'ब्रह्म सत्यं जगत मिथ्या'। ब्रम्ह का अर्थ है- आत्मा, जगत का अर्थ है- पदार्थ। इस जगत में आत्मा ही सत्य है, वही शाश्वत है। जो सत्य है वही शाश्वत है। यह शरीर पदार्थ (हड्डी मांस, त्वचा आदि) से बना है इसलिए असत्य है। असत्य है इसलिए बदलता है।

याद करें जब आपका जन्म हुआ तो आप पुष्प जैसे सुकोमल थे। लोग आपको गोद में उठाते थे। दुलारते थे। फिर आप युवा हुए। शरीर विकसित हुआ। रूप और यौवन के मद में संसार की हर असत्य वस्तु का आपने भोग किया। यौवन ढलने के साथ शारीरिक उर्जा क्षीण हुई। आँखों की रोशनी मंद पड़ने लगी। अस्थियाँ कड़काड़ने लगी। शरीर जो एक दिन सुकोमल था, वह बोझ बन गया। बुढ़ापे में शरीर की कैसी दशा हो जाती है, यह शंकराचार्य से सुनिए...

अंग गलितं पलितं मुंडम, दंतविहीन जातं तुंडम।

कर धृत कम्पित शोभित दण्डं, तदपि न मुंचत्याशापिण्डम॥

अर्थात, अंग गल गए हैं, केश श्वेत हो गए हैं, दांत गिर गए है, कांपते हाथों में डंडा लिए हुए हैं। फिर भी सांसारिक आशाओं का पिंड नहीं छुटता है।

जन्म से बात शुरू की थी तो मृत्यु को नहीं भूल सकते। कबीर ने कहा था-

हाड जले ज्यों लाकड़ी, केश जले ज्यों घास।

सब तन जलता देख के, भया कबीर उदास॥

कबीर पढ़े-लिखे नहीं थे। उन्होंने स्याही- कलम को छुआ नहीं था पर उनका एक एक दोहा, दोहे का एक-एक सूत्र आत्मज्ञान से सराबोर है। आत्मज्ञानी कबीर कहते हैं- जिन हड्डियों की मालिश की, बादाम रोगन लगाया, वे लकड़ी की भांति धूं-धूं जल रही है। कुंडल केश खूब संवारे, वे ऐसे जल रहे हैं जैसे घास जलती है। सारा तन जल रहा है।

क्या बदला...? शरीर जिसे आप अपना मानते थे, उसे आत्मा छोड़ गई।

यही ज्ञान है. यही सत्य है। अज्ञानी व्यक्ति असत्य का पोषण करता है। बनना और मिटना जिस शरीर का धर्म है, उसके पोषण में लगा रहता है। असत्य के पीछे जो सत्य छिपा है... शरीर में जो आत्म तत्व विराजमान है, उसे नहीं देखता। आइए एक बार फिर कबीर को याद करे। उन्होंने कहा है-

साधो! यह तनु मिथ्या जानो!

या भीतर जो राम बसत है, सांचा ताहि जानो।

अर्थात, यह तन मिथ्या है। इस तन से जुड़ी हर वस्तु, हर सम्बन्ध मिथ्या है। तन के भीतर जो जीव (राम) है, वही सत्य है। उस सत्य को जानो। उस सत तत्व की उपासना करो। कबीर से बहुत पहले भगवान महावीर ने आत्मा से आत्मा के साक्षात्कार का उपदेश देते हुए कहा था-

‘ **आत्म तत्व के अतिरिक्त जो कुछ भी है, वह आपका नहीं है**

यह परिवार, यह धन, यह पद, यह प्रतिष्ठा, यह व्यापार- व्यवसाय और यह शरीर आपका नहीं है। ये सब संयोग है। आज है, कल नहीं होंगे। संयोग के साथ वियोग छाया की भांति जुड़ा हुआ है। इस अटल सत्य को भूलकर मनुष्य प्रयास करता है कि सुदर संयोग बने रहे। लेकिन ऐसा होता नहीं है।

शिवाचार्य कहते हैं-

आप सब सुख, शांति और आनन्द चाहते हैं। आप ही क्यों, सृष्टि का हर प्राणी यही चाहता है। हर प्राणी की भाग- दौड़ का अंतिम लक्ष्य सुख प्राप्त करना है। आप इसलिए धन कमाते हैं कि सुख-साधन जुटा सकें। पद और प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकें। सुख की अनुभूति कर सकें। जन्म से मृत्यु तक प्रत्येक प्राणी सुख प्राप्ति के लिए प्रयास करता है। जन्म- जन्म की यही कहानी है। लेकिन क्या सुख मिल पाता है? जिस भी सुख के पीछे आप दौड़ते हैं, उसे प्राप्त कर लेने के बाद आपको पता चलता है कि अरे यह तो सुख है ही नहीं। सुख तो वह होता है जो आपको आनन्द से भर दे, जो आपको शान्ति में ले जाए, जिसे प्राप्त करने के बाद आप कह उठे- बस, अब और कुछ नहीं चाहिए।

क्या ऐसा परमानन्द... क्या ऐसी परम शान्ति मिलती है। जी हाँ, मिलती है। ऐसा परमानन्द और परम शांति आत्म ध्यान से मिलती है। आज, अभी आप आत्म ध्यान करें, अभी उसकी अनुभूति होगी। यह ऐसी साधना नहीं है कि आज करो और वर्षों बाद परिणाम मिले। आत्म ध्यान कहने- सुनने या समझाने की बात नहीं है। इसे तो स्वयं अनुभव करना पड़ता है।

किसी एक पल नहीं, किसी एक दिन नहीं और किसी एक साल नहीं, पर जीवन पर्यन्त आनन्द में रहने की कला या साधना है- आत्म ध्यान। बिना कठोर तप किए, बिना किसी साधन को जुटाए आप इस साधना से आनन्द का अनुभव कर सकते हैं। जैसे जल में शीतलता वैसे ही आत्मा में आनंद है।

आपके जीवन में चाहे जितनी समस्या हो, उनके साथ जीने की कला सीखा देगा आत्म ध्यान। इसका साधक दुःखातीत और क्लेशातीत हो जाता है। आत्म ध्यानी बड़ी से बड़ी समस्या व शिकायतों को चुटकियों में निपटा देता है। क्यों?

क्योंकि आत्म ध्यान आपको अपनी आत्मा से जोड़ता है। उस आत्मा से जिसे भगवान महावीर ने शाश्वत आनन्दरूपा कहा है। उन्होंने कहा है-

जैसे जल के कण-कण में शीतलता समाई है ,

वैसे ही आत्मा के कण-कण में आनंद समाया हुआ है।

विडम्बना यह है कि हमें आत्मा का बोध नहीं होता और हम सुख की खोज में बाहर भटकते हैं।

यही बुद्ध ने कहा है। यही उपनिषद कहते हैं। सबका निहितार्थ एक ही है- ध्यान से भीतर का ज्ञान प्रकट होता है। आत्म ज्ञान उद्घाटित होता है। कैसे...

जल की जरूरत हो तो दूरंदेशी शख्स कुआँ खोदता है, हौज नहीं बनाता। वह जानता है कि भू-गर्भ में जल है। इसे डिस्कवर करना है। इस डिस्कवरी के लिए वह मिटटी की परतें हटाता है। पत्थर उठाता है। कुआँ जितना झुकता है यानि नीचे जाता है उसमें जल के उतने ही झरने फूटते हैं। पर जब हम हौज बनाते हैं तो मिटटी, पत्थर, सीमेंट, रेत और ईंटो से दीवारें बनाते हैं। हौज जमीन के उपर उठता है, पर खाली। उसमे जल भरना पड़ता है जबकि कुए की झीरें समुद्र से जुड़ी होती है।

कुआँ कहता है- उलीचो... उलीचो। जितना चाहे उतना जल ले लो, मैं फिर भर जाऊंगा। हौज कहता है- लाओ और पानी लाओ।

हम क्या कर रहे हैं? कुआँ खोद रहे हैं या हौज बना रहे हैं। जीवन जल चाहिए तो आत्मा पर जमा हो गई परतें हटानी पड़ेंगी। आत्मा की गहराई में जितना उतरेंगे उतने झरने फुट पड़ेंगे। आप अपने मूल से जुड़ जाएंगे तो कहेंगे- उलीचो जितना चाहे उतना उलीचो। जितना चाहे उतना 'जीवन-जल' ले लो। मैं फिर भर जाऊंगा और हौज बनाएँगे यानि खूब धन कमाएंगे, खूब पद- प्रतिष्ठा प्राप्त कर लेंगे पर कहेंगे- खाली हूँ, लाओ और लाओ।

शिवाचार्य की 40 साल की ध्यान साधना और आत्म ध्यान की खोज का निचोड़ है- आत्म तत्व के अतिरिक्त जो कुछ भी है वह आपका नहीं है। आत्म ध्यान के बिना

मिला ज्ञान भी, शाब्दिक ज्ञान है। सूचनाएँ है जो मनुष्य के ब्रेन को इन्फार्मेशन सेंटर तो बना देती है पर उसमें अनुभूति का रस नहीं है। यह ज्ञान भी शुष्क और मृत है।

सच केवल यह है कि हर देह में आत्मा रूपी शाश्वत देवता विराजमान है। उसी शाश्वत देवता की आराधना विधि है- आत्म ध्यान। आत्म ध्यान से आप अपने अंतर्मन में विराजे देवता से रूबरू होते हैं। तन्मयता से उसके साथ जुड़ते हैं। वस्तुत: यह खुद से साक्षात्कार है, खुद से जुड़ना है। क्योंकि आप ही आत्मा है।

आत्म ध्यान की साधना से बोध हो जाता है कि आत्मा का कोई रूप नहीं है, वह वर्णनातीत है। मूर्त शरीर में होते हुए भी अमूर्त है। महावीर, बुद्ध, कृष्ण और क्राइस्ट की आत्मा और मेरी आत्मा में कोई अंतर नहीं है। नारायण हो, नर हो या नराधम या देवलोक के देव हो, इहलोक के मनुष्य हो या नरक का नेरिया- आत्म दृष्टि से सबकी आत्मा समान है। इस सत्य का बोध होते ही आत्म ध्यान के साधक को मिल जाता है अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत सुख और अनंत शक्ति। अनंत का अर्थ है जिसका कभी अंत नहीं होता, जो पहले भी था, आज भी है, आगे भी रहेगा। वही केवल ज्ञान के रूप में प्रकटेगा जो हर आत्मा में विद्यमान है. ध्यान से ही अनुभव होता है कि हम सभी आत्मा है और सभी समान है।

क्या है अनंत ज्ञान

अपनी आत्मा को जानने से अनंत ज्ञान प्रकट होता है। यह आत्म ध्यान साधना से मिलने वाली अनुभूति है जिसे शब्दों से नहीं समझाया जा सकता है। बुद्धि और पुस्तकों का ज्ञान मृत्यु के साथ समाप्त हो जाता है। अनंत ज्ञान कभी समाप्त नहीं होता। यह जीवन भर साथ रहता है।

क्या है अनंत दर्शन

दो दृष्टि है- एक मिथ्या और दूसरी सम्यक दृष्टि, सत्य की दृष्टि, आत्म दृष्टि। आत्म ध्यान से मिथ्यात्व का संसार छूटता है तो जीव अपने भीतर के सत्य का दर्शन करता है। मिथ्या दृष्टि सबमें शरीर और कर्म के आधार पर अच्छे बुरे का मुल्यांकन करती

है। आत्म दृष्टि संसार की अनंत आत्माओं को अपनी दृष्टि से देखकर, दृष्टा बना देती है। यही है अनंत दर्शन।

क्या है अनन्त सुख

आज सुख की तलाश में मनुष्य मशीन बन गया है। समय से उठना, दुकान- दफ्तर जाना, घर आना, टीवी देखना, खाना और सो जाना। चैन के पल जीवन से खो गए हैं। आदमी समझदार हो गया है पर सरलता खो गई है। वह न सुख को सरलता से अपना रहा है और न ही दु:ख को जबकि सुख- द:ख का योग है संसार। संसार का हर जीव सुख- दु:ख के चक्रव्यूह में फँसा हुआ है। आत्म ध्यान की गहराई में गोता लगाने वाले साधक को उस सुख का बोध हो जाता है जिसकी संसार के किसी व्यक्ति, वस्तु या परिस्थिति से मिलनेवाले सुख के साथ तुलना नही की जा सकती। शिवाचार्य इसे अनंत सुख कहते हैं और समझाते हैं कि यह अनंत है, यानि इसका कभी अंत नहीं होगा। अनंत सुख ही सच्चा सुख है, जो आत्म ध्यान से मिलता है।

क्या है अनंत शक्ति

आप कहीं भी रहे- महल में, वन में, घर में या कुटीर में, आत्मा की अनंत शक्ति हमेशा आपके साथ होती है। शमशान में अंतिम संस्कार के साथ ही सारे नाते रिश्तेदार भूल जाएँगे। शरीर जल जाएगा। इसके बाद आपकी आत्मा जहाँ जाएगी, जिस योनि को पाएगी- आत्म ध्यान से प्राप्त अनंत शक्ति वहां भी आपके साथ होगी। आत्म ध्यान इस अनंत शक्ति का बोध करवा देता है।

आईए, एक बार फिर उपनिषदों का उपदेश- 'ब्रह्म सत्यं जगत मिथ्या' और भगवान महावीर का कथन- 'आत्मा से आत्मा को देखो' को याद करें। 'आपुन ही आपुन को बिसारो' वाली भूल को सुधारें और आत्म ध्यान साधना करके आत्म ज्ञान प्राप्त करें। आत्म ज्ञान से ही मिलेगा- 'अनंत ज्ञान, अनंत सुख और अनंत शक्ति।

पूनम की रात थी। कुछ युवकों ने भांग का नशा किया और वे झील के किनारे पहुँचे। वहां वे एक नौका में बैठ गए। हवा बह रही थी। भांग का नशा था। युवक मस्ती में थे। वे नाव खेने लगे। उन्हें खूब मजा आ रहा था। नौका विहार का ऐसा

आनन्द उन्हें पहली बार मिला था। सुबह हुई। युवकों ने सोचा- रात भर में तो वे बहुत दूर आ गए होंगे। उनमें से एक युवक नाव से उतरा और हँसने लगा। शेष युवक उसे हँसते हुए देखकर चकित हुए। उन्होंने कारण पूछा तो वह युवक बोला- नौका से उतरो, तुम भी मेरी तरह हंसोगे। यही हुआ। हुआ यह था कि वे नौका को खूंटी से खोलना ही भूल गए थे। रात भर पतवार चलाते रहे, नौका हिलती रही पर जहाँ थी वहीं खड़ी रही।

वे युवक तो भांग के नशे में थे, पर आप! आप होश में वही भूल कर रहें हैं। जन्म के समय आपको भी शरीर रूपी नौका मिली थी। सब और चांदनी खिली हुई थी। शीतल सुगन्धित हवा बह रही थी। चाहते तो आप अनंत यात्रा पर निकलकर अनंत में विलीन हो सकते थे। जीवन का अंत आपके लिए अंत नहीं बनता, अनंत का द्वार बन जाता। लेकिन सांसारिक सुख-दुःख के चक्रव्यूह में उलझकर आप वहां पतवार चलाते रहे, जहाँ पानी ही नहीं था। इस भ्रम में पूरा जीवन गुजार दिया कि आपने सुख- सुविधा का शिखर छू लिया है। जीवन के चतुर्थ चरण में समझ में आया जो पाया था वह अपना नहीं था और जो अपना था वह खो दिया है।

खैर, जब जागे तब सबेरा... अब सांसारिक नौका से नीचे उतरें और आत्म ध्यान के सागर में गोता लगाएँ। पहली ही डुबकी से अदभुत आनन्द की अनुभूति होगी और फिर हर डुबकी से मिलने लगेगा वह परमानन्द जो तीर्थंकर महावीर और अनंत तीर्थंकरों को मिला था।

अध्याय - 2

आत्म बल लौटाता है आत्म ध्यान

(आचार्य श्री डॉ. शिव मुनिजी के ज्येष्ठ शिष्य, प्रमुख मंत्री आत्म योगी श्री शिरीष मुनिजी आत्म ध्यान शिविरों का संचालन कर रहे है। सन 1990 में डॉ. शिव मुनिजी ने उन्हें दीक्षा प्रदान की। इसके बाद से वे अपने गुरु के सानिध्य में ही हैं। उन्होंने अपने गुरुवर को मुनि से ध्यान-गुरु बनते देखा है। आचार्यप्रवर डॉ. श्री शिव मुनिजी की आत्म ध्यान खोज के प्रथम साक्षी है- श्री शिरीष मुनिजी।)

वे कहते हैं-

जिस तरह तिलों में तेल, मलाई में मक्खन है, सूखी नदियों में दबा पानी है या घर्षण में आग है उसी तरह हमारी आत्मा में छुपा हुआ है परमात्मा।

इसी आत्म ज्ञान के अध्ययन की पाठशाला है आत्म ध्यान शिविर। ध्यान से 'स्व' का बोध होता है। आत्म ध्यान हमारी चेतना को समस्त संकल्पों- विकल्पों (शंका-आशंका) से स्वतंत्र कर देता है। आत्म ध्यान से मनोवृत्ति शुद्ध हो जाती है। क्रोध, क्लेश, अहंकार, लोभ, छल- कपट और राग-द्वेष का विलय हो जाता है।

आत्म ध्यान को सत्रों (sessions) में बांटकर साधकों से जो अलग- अलग साधना करवाई जाती है, वे हैं- प्रार्थना, सोस्हं ध्यान, कोस्हं ध्यान, योग- निद्रा, मैं- मेरा ध्यान, आलोचना और कायोत्सर्ग। ध्यान गुरु आचार्यश्री डॉ. शिवमुनिजी ने इन सारे sessions की तर्क संगत डिजायनिंग की है जो आत्म ध्यान साधना को विश्वसनीय, लक्ष्य-भेदी और वैज्ञानिक बनाती है।

आत्म ध्यान शिविर के पहले सेशन में साधकों को आगाह किया जाता हैं कि आपने अनेक साधनाएँ की होंगी। कई शिविरों में शामिल हुए होंगे। उन सब विधियों और अनुभवों को भूल जाओ। पहली क्लास के छात्र की तरह हो जाएँ। स्कूल में पहले दिन छात्र वही करता है जो उसे करने को कहा जाता है। वह अपनी ओर से कुछ नहीं करता और न ही कुछ जोड़ता है। आत्म ध्यान शिविर में आपको यही करना है।

प्रार्थना ध्यान-

हर मांगलिक प्रसंग की शुरुआत प्रार्थना से होती है। आत्म ध्यान शिविर में भी सबसे पहले प्रार्थना करवाई जाती है पर इसका तरीका और लक्ष्य परम्परागत प्रार्थना से अलग है। यहाँ साधकों से कहा जाता है कि परमात्मा किसी मन्दिर- मस्जिद-गुरुद्वारे या गिरिजाघर में नहीं है। वह किसी मन्त्र या स्तोत्र से भी नहीं मिलता। उसे खोजने की जरूरत ही नहीं है। आपकी आत्मा ही आपका परमात्मा है।

आत्म ध्यान साधक को याद दिलाया जाता है कि अब तक आपने जितनी प्रार्थनाएँ की उनका लक्ष्य था- संसार। आपने परमात्मा से अब तक सांसारिक सुख- सुविधा मांगी है। अब प्रार्थना करिए- हे परम पिता परमेश्वर, आज तक संसार मांगा और संसार ही मिला। आज कहिए- हे परमात्मा, मैं इस देह से आसक्त हूँ। यह आसक्ति टूटे, मेरे जन्म- मरण के बंधन छूटें, मेरा राग-द्वेष छूट जाए, ये संसार क्या करता है मुझे अब इससे कोई लेना-देना नहीं। आज तक अज्ञान अवस्था में मैंने संसार माँगा आज आत्म ज्ञान मांग रहा हूँ।

प्रार्थना क्यों? किसलिए?

आत्म-सुधार की प्रयोगशाला है आत्म ध्यान। आत्म ध्यान स्व-केन्द्रित साधना है। साधक अपने 'स्व' को जानना चाहता है। अपने आप को देखना चाहता है। अत: आत्म ध्यान अर्जन की साधना नहीं, विसर्जन की साधना है। प्रार्थना के माध्यम से साधक अपने परमात्मा से कहते हैं- हे प्रभो, अज्ञान अवस्था में मैंने अब तक जो Store किया आज उसे Delete करना चाहता हूँ।

यह कम्प्यूटर, लेप टॉप और स्मार्ट फोन का युग है। यदि इन डिवाइसेस में Data Store करना हो तो समय लगता है, श्रम करना पड़ता है। लेकिन Delete करना हो तो एक बटन दबाते ही सारे Data समाप्त हो जाते हैं। हमारे कम्प्यूटर, लेप टॉप और स्मार्ट फोन में जब उनकी क्षमता से ज्यादा Data Store हो जाते हैं तो हमारेDevice hang हो जाते हैं, धीमे हो जाते है। तब हम क्या करते हैं? गैरजरूरी Data Delete कर देते हैं।

यही हमारे जीवन में हो रहा है। हमारे मन मानस में गैरजरूरी यादें, अनुभव, संस्मरण और नकारात्मकता भर गई है। जिन्दगी हेंग हो गई है यानि तनाव है, दबाव है, भागदौड़ है। आत्म ध्यान Delete का वह बटन है जिससे मन मानस में अनादिकाल से Store Data भी Delete हो जाते हैं। आत्म ध्यान साधना Store करने की नहीं Delete करने की साधना है।

सोऽहं ध्यान

आँखे बंद करके, एक हाथ पर दूसरा हाथ रखकर साधक सिर से पांव तक शांत व शिथिल हो जाए, मन शांत हो जाए, विचार शांत हो जाए तब शुरू होती है यह साधना। साधक अपना सारा ध्यान सामान्य गति से आने- जाने वाली श्वास पर केन्द्रित करता है। उससे अब कहा जाता है कि अब कोई भी श्वास उससे मिले बिना न आए और न जाए। सम्पूर्ण ध्यान श्वास के आने- जाने पर बना रहे। किसी विचार पर महत्व न दें। ध्यान के दौरान अच्छे- बुरे विचार आएँगे, अपने आप चले जाएँगे। साधक का ध्यान श्वास -प्राश्वस पर बना रहे। उसे हर श्वास के साथ सोऽहं की ध्वनि जोड़ना है। श्वास लेते हुए सो और श्वास छोड़ते हुए हं की ध्वनि यानि 'सोऽहं' आत्मा- परमात्मा के मिलन की ध्वनि है।

सोऽहं ध्यान क्यों?

जन्म से ही हमारे भीतर श्वास का आवागमन चल रहा है परन्तु हमने कभी इसका अनुभव नहीं किया। यदा-कदा दुर्घटना होने, आघात लगने या रुग्ण होने पर श्वास कम्पकपाई तो हमे श्वास की याद आई। पूरे होश हवास के साथ उस श्वास को याद ही नहीं किया जो सोते- जागते, खाते- पीते, हंसते- रोते हमें जिन्दा रखती है।

आत्म ध्यान की सबसे पहली उपलब्धि है- साँस के प्रति जागरूकता और साँस के जरिए अपनी आत्मा के प्रति कृतज्ञता-ज्ञापन।

सोऽहं मन्त्र या शब्द नहीं है, यह एक ध्वनि है। आपने कभी ध्यान नहीं दिया कि जब आपकी श्वास भीतर जाती है तो 'सो' की ध्वनि होती है। जब बाहर निकलती है तो 'हं' की ध्वनि होती है। इस ध्वनि को जब श्वास के साथ जोड़ते हैं तो विचार और बुद्धि से परे निकल जाते है। यह वैसा ही है जैसे पैर में चुभे कांटे को दूसरे कांटे से निकालना। ध्यान करते समय मन भटके तो उसे सोऽहं से जोड़ देना, विचारों की श्रंखला तोड़ देना है।

एक और उदाहरण से समझें। जिन्हें तैरना नहीं आता, उन्हें हवा भरी ट्यूब के साथ पानी में उतारा जाता है। वही व्यक्ति जब तैरना सीख जाता है तो ट्यूब उसके लिए व्यर्थ हो जाती है। ध्यान के साधक के लिए शुरुआत में सोऽहं ध्वनि ट्यूब के समान है। जब ध्यान स्थिर हो जाए, सध जाए तो इस ट्यूब को छोड़ दो।

ध्यान में स्थिर होने यानि स्थितप्रज्ञ होने पर साधक आनन्द, शांति और ज्ञान से जुड़ जाता है। ध्यान की इस अवस्था में ही उसे बाह्य लोक से आँखे मूंदकर अपनी देह को रिसर्च सेंटर बनाना है। साधक को अब अपने मूल स्वभाव को खोजना है। इसकी झलक मिलते ही आत्म ध्यान साधना शुरू हो जाती है। जीवन एक नाचता-गाता उत्सव बन जाता है।

ध्यान साधना की इस उपलब्धि को तर्क से भी समझें। हम सब आनन्द, शांति और ज्ञान प्राप्ति के लिए भाग दौड़ कर रहे हैं। हम इन्हें संसार के पदार्थों में खोज रहे हैं जो मृत है, जड़ है और हम! हम चेतन हैं, अमृत हैं। चेतन के गुण- धर्म या चेतन का स्वभाव चेतन से ही प्राप्त किया जा सकता है। आत्म ध्यान चैतन्य अवस्था की खोज है।

आचार्यश्री डॉ. शिव मुनि ने इसलिए ध्यान का आधार किसी पदार्थ को नहीं चुना बल्कि श्वास ध्वनि (सोऽहं) को सूक्ष्म तक पहुँचाने का जरिया बनाया। यही नहीं, ध्यान की पूर्ण अवस्था में पहुँचने पर इस माध्यम को भी हटा दिया। वे अपने साधक से कहते हैं- विचार शांत हो गए, बुद्धि स्थिर हो गई, अब जो हो रहा है, उसे

होने दें। द्दष्टा बन जाएँ. कुछ भी तांक- झाँक न करे। श्वास को भी भूल जाएँ। बस शांत बैठे रहें। ऐसे हो जाएँ, जैसे झील, जिसमें कोई तरंग नहीं होती, बस चाँद झाँकता है। ध्यान की इसी अवस्था में आपकी आत्मा आपमें झाँकती है। आप परमानन्द और परम शांति की अनुभूति पाते हैं। यह वह आनन्द और शान्ति हैं जो आपके भीतर थी, आपके भीतर है पर रिफ्लेक्ट अब हो रही है, वह भी पूर्ण जागृत अवस्था में। यह आत्म साक्षात्कार और आत्म दर्शन है।

ध्यान को नियमित जीवन का अंग बना लेंगे तो अनुभूति के ये क्षण बढ़ते जाएँगे। हमने पढ़ा और सुना है कि योगीजन कई- कई घंटे ध्यानस्थ (समाधिस्थ) रहते हैं। यह असत्य नहीं है। जब आत्म साक्षात्कार ठीक से सध जाता है तो ध्यान परम रस बन जाता है। साधक उसमे ऐसा रम जाता है कि बाहर आना ही नहीं चाहता।

कोऽहं ध्यान

कोऽहं का अभिप्राय- मैं कौन हूँ? कोऽहं ध्यान से साधक अपने सत्य की खोज करते हैं।

कोऽहं ध्यान करते हुए साधक अपने आप से पूछता है- मैं कौन हूँ? मैं कहाँ से आया? मुझे कहाँ जाना है? मेरा लक्ष्य क्या है? मुझे यह देह और चोला (पुरुष या स्त्री) क्यों मिला? मुझे धन- दौलत क्यों मिली? क्या यह देह, यह चोला, यह धन- दौलत, यह विद्वत्ता शाश्वत है। क्या सांस टूटने के बाद भी यह सब मेरे साथ रहेगा? मैं जिस देह से मोह करता हूँ इससे मेरा सम्बन्ध कहाँ तक है? क्या यह सब मैंने पहली बार प्राप्त किया है? अपने जीवन में मैंने क्या कमाया? क्या खोया? जिस देह, धन- दौलत, रिश्ते- नातों को मैं अपना मानता हूँ, क्या वे वास्तव में मेरे हैं? क्या मैं वास्तव में मोक्ष चाहता हूँ? मोक्ष पाने के लिए क्या मैं तैयार हूँ? क्या मोक्ष रटने से किसी को मोक्ष मिला है?

ये और ऐसे सारे सवाल आपके हैं। आपने इन्हें आज तक हल नहीं किया। आज ध्यान लगाएँ और इन सवालों को दोहराएँ। कोऽहं ध्यान आत्म-रमन, आत्म-चिंतन, आत्म- निरीक्षण और आत्म- परीक्षण है। आत्मा से परमात्मा के मिलन की साधना है. स्वयं के करीब आने की साधना है।

कोऽहं ध्यान क्यों?

कोऽहं ध्यान का लक्ष्य है- यथार्थ की खोज। आपके गुह्य और वास्तविक स्वरूप की खोज।

आपने पीछे पढ़ा है कि आपका नाम आप पर थोपा गया है। 'नाम' आप नहीं है। तो सोचिए एक व्यक्ति जो अपने नाम-धाम-गाँव तक नहीं जानता, उसे क्या कहेंगे? उन्मत्त, पागल या बावला ! आध्यात्मिक दृष्टि से सांसारिक जीवों की यही स्थिति है। वे खुद को नहीं जानते। कोऽहं ध्यान इसलिए करवाया जाता है कि साधक खुद को जानें। याद रखें कि नाम आरोपित है। इस नाम को सम्मान मिले तो गदगद मत होइए। इस नाम को गाली मिले तो खिन्न मत होइए। यह जान लीजिए कि यह देह, इस देह के साथ बने रिश्ते- नाते आपके नहीं हैं। देह के नजरिए से हम सब भिन्न है। आत्म दृष्टि से अभिन्न(समान) है।

इस जगत में जितने भी मनुष्य है उनका रूप-रंग-शक्ल अलग अलग है। यही प्रकृति की सृजनशीलता है। वैज्ञानिक भी पूरे ब्रम्हांड में एक जैसे दो पत्ते नहीं खोज पाए है। हम डाईयों से प्लास्टिक के एक जैसे लाखों फुल-पत्ते बना लेते हैं। सोचिए कि प्रकृति ने जो बनाया, उसे मनुष्य आज तक गिन भी नहीं पाया है और न ही आज तक एक जैसे दो पदार्थ खोज पाया है। प्रकृति की सृजनशीलता अनंत है। आकार- प्रकार की दृष्टि से सब भिन्न है पर आत्म तत्व की दृष्टि से कोई भी भिन्न नहीं है। भारत का मनुष्य सुख- शान्ति चाहता है तो अमेरीका का मनुष्य भी यही चाहता है। हाथी सुरक्षा चाहता है तो चींटी भी। सुख व सुरक्षा हर चैतन्य की, हर आत्मा की चाह है। यही हर आत्मा का गुणधर्म है।

कोऽहं ध्यान इसी भेद विज्ञान की साधना है। इस ध्यान से साधक को बोध होता है कि शरीर के तल पर वह दूसरों से भिन्न है, परन्तु आत्मा के तल पर अभिन्न। कोई छोटा- बड़ा नहीं है। पिता- पुत्र और पति- पत्नी सब समान है। पशु, पक्षी, पृथ्वी, पानी, हवा, अग्नि, वनस्पति तक में वही आत्म तत्व है जो उसमें है, जो सबमें हैं।

कोऽहं ध्यान 'वसुधैव कुटुम्बकम धारणा को पुख्ता करता है। इस ध्यान का साधक इस सचाई को स्वीकार करने लगता है कि सृष्टि को नहीं बदला जा सकता है।

अपना नजरिया बदल लेंगे तो सृष्टि स्वत: आपके अनुकूल हो जाएगी। धरती स्वर्ग बन जाएगी।

कोऽहं ध्यान के सिद्ध साधक के लिए वर्तमान जीवन स्वर्ग है। वह मानता है कि जो वर्तमान जीवन को स्वर्ग नहीं बना सकता उसका शेष जीवन ही नहीं, अगला जन्म भी स्वर्ग नहीं बन सकता।

आत्म ध्यान गुरु आचार्यश्री डॉ. शिव मुनिजी ने कोऽहं ध्यान साधना की खोज की ताकि हम सांसारिक दायित्वों का निर्वहन करें पर विरक्त भाव से। उनकी सोच है कि जैसे- जैसे आपका यह ध्यान परिपक्व होगा वैसे- वैसे आप संसार में रहते हुए संसार के आकर्षण से परे (शिथिल) होते जाएँगे। विरक्त और अनासक्त होते जाएंगे।

योग निद्रा

आत्म ध्यान शिविर का सबसे दिलचस्प सेशन है- योग निद्रा। इसका ध्येय है- एक योगी या एक सन्यासी की भांति देह को विश्राम देना. सन्यासी, योगी या फकीर विश्राम के क्षणों में भी प्रमाद (मिथ्यात्व) से बचते हुए आत्मा में रमण कर लेते है। योग निद्रा में एक रनिंग कमेंट्री के माध्यम से साधक की आत्मा को भी ऐसा ही विचरण करवाया जाता है।

यह साधना विश्राम से शुरू होती है और विश्राम पर विराम लेती है इसलिए इसका अभ्यास करवाने के पूर्व साधक संकल्प लेते हैं कि प्रयोग के दौरान नींद या आलस्य अवस्था में नहीं जाएँगे और अपनी देह को जरा भी नहीं हिलाएँगे।

इस संकल्प को दो बार दोहराने के बाद उनसे कहा जाता है- अनुभव करें कि आपकी बुद्धि शांत हो गई है। आपकी भौंहे, आँखें, नाक, कान, गाल, होंठ, जिव्हा, ठोड़ी शांत हो गए हैं। छाती, हृदय, पेट और पेट की आँते शांत हैं। पीठ, रीढ़ की हड्डी और उसका हर मनका शांत है। कमर, जंघा, घुटने, टांगे और पांव शांत हैं। सर के सिरे से पांव के अंगूठे तक और पांव के अंगूठे से सर के सिरे तक सारा शरीर शांत- शांत- शांत है। इस शांत देह में आप अपनी श्वासों की गिनती करें। होशपूर्वक अपनी आती- जाती श्वांसों को देखें।

इसके बाद एक रनिंग कमेंट्री से साधक को निर्देश मिलते हैं कि वह ध्यानस्थ देह को साधना कक्ष में छोड़कर विचरण के लिए कक्ष से बाहर निकले। वह अनुभव करे कि मैं आत्मा हूँ और मेरी देह चल रही है। देह श्मशान पहुंचती है. वहां एक शव जलाया जा रहा है। शव के पूरी तरह जलने के पहले ही मृतक के सम्बन्धी घर लौट रहे हैं। साधक सोचता है - जिस देह में मैं हूँ, उसे भी एक दिन जलना है और उसके नाते रिश्तेदार भी तब यही करेंगे।

इस सचाई से साक्षात्कार करवाने का लक्ष्य है साधक को यह समझाना कि कर्म के अनुसार सबको अलग अलग देह मिलती है। देह नश्वर है। देहांत वस्तुत: देहान्तर है। देह छुट जाती है। आत्मा दूसरी देह में स्थानांतरित हो जाती है।

योग निद्रा का उद्देश्य है यह समझना कि प्रत्येक प्राणी में उसके जैसी ही आत्मा है। जो गुण धर्म उसकी आत्मा के है वही प्रत्येक आत्मा के है। यहाँ कोई छोटा नहीं है, कोई बड़ा नहीं है। सब समान है। फिर किसी से भी राग द्वेष क्यों?

मैं और मेरा ध्यान

आत्म ध्यान के इस सेशन में योग निद्रा की तरह शरीर के अंगोपांगो (नख से सिर तक और रिवर्स) को शांत व शिथिल कर लेने के बाद साधक को कहा जाता है कि ध्यान करे- शरीर छुट जाएगा, मालकियत की सारी सम्पदा- सुख- सुविधा छुट जाएगी तो शेष क्या रहेगा।

इस शाश्वत सवाल का जवाब है- 'मैं' अलग हूँ, 'मेरा' अलग है। 'मैं' शुद्ध आत्म तत्व हूँ। जिसे मैंने मेरा बनाया, वस्तुत: वह मेरा है ही नहीं। जो मेरा नहीं है उससे ममत्व ही इस जगत में दु:ख का सबसे बड़ा कारण है। मैं अब ऐसे हर तत्व- मेरा घर, मेरा परिवार, मेरी दुकान, मेरा कारखाना, मेरी मोटर कार, मेरी ज्वेलरी मेरे मान-सम्मान से खुद को अलग करता हूँ। यह सब यूँ भी छूटने वाला था। क्यों न इसे मैं अपनी प्रज्ञा से छोड़ दूँ।

श्री शिरीष मुनिजी कहते हैं-

आत्म ध्यान साधक को यह नहीं कहता कि घर- परिवार, धन- दौलत छोड़कर किसी एकांत गुफा में रहो। आचार्यश्री धन, पद, प्रतिष्ठा को हेय दृष्टि से नहीं देखते। उनके अनुसार यह पुण्य के सुफल हैं। आत्म ध्यान साधना यह बोध जगाती है कि जो मिला है उसे अपने मस्तिष्क का बोझ न बनने दे। पुण्य के फल जितना ही मूल्य दें। इस अहम से बचे कि मैं अरबपति हूँ, मैं प्रतिष्ठित हूँ।

आचार्यश्री का संदेश..

संसार में जलकमलवत (कमल कीचड़ में रहता है पर कीचड़ को छूता भी नहीं) रहे, यानि ना काहु से दोस्ती ना काहु से बैर।

जैन साहित्य की एक बोध कथा हैं...

महाराज नमि अपने महल की छत पर टहल रहे थे। उन्होंने देखा कि मांस का एक टुकड़ा मुंह में दबाए एक पक्षी का कई पक्षी पीछा कर रहे हैं। उनके आक्रमण से घायल वह पक्षी दायें-बाएं उड़कर जान बचाने का प्रयास करता है पर मांस के लोभी दुश्मन उसका पीछा नहीं छोड़ते। थक- हारकर वह उस मांस के टुकड़े को मुंह से छोड़ देता है और वृक्ष की एक डाल पर बैठ जाता है। अब सारे पक्षी उस मांस के टुकड़े को लेकर संघर्ष करने लगते हैं।

यह दृश्य देखकर महाराज नमि ने चिंतन किया- जहाँ पकड़ है वहां संघर्ष है, वहां झगड़ा है। पकड़ छोड़ते ही शांति मिल जाती है। हमारे जीवन में भी अशांति का कारण पकड़ है।

आलोचना

आत्म ध्यान शिविर के इस सेशन को कई साधक साधारण क्रिया मानते हैं पर यह अत्यंत महत्वपूर्ण सत्र है।

आत्म अवलोकन से अंतरात्मा तो शुद्ध हो जाती है पर कुछ मैल आत्मा पर चिपका रह जाता है। जैन दर्शन में इस मैल की स्वच्छता के लिए एक साधना है- गरिहामि (Confession).

आचार्यश्री डॉ. शिव मुनिजी के अनुसार शुरू में यह प्रथा सभी धर्मों में थी, लेकिन जैन धर्म ने इसे गरिहामि के अलावा क्षमापना परम्परा से, तो ईसाई धर्म ने इसे Confession से जीवित रखा है। गिरिजाघरों में आपने Confession बाक्स देखे हैं। इसके एक हिस्से में फादर बैठते हैं। लोग आते है और अपना अपराध कबूल करते हैं। फादर परम्परा और नियमानुसार उपाय बता देते हैं। यह बहुत सुन्दर परम्परा है। पारसी समुदाय का न्यू ईयर है- जमशेद नवरोज। नव वर्ष के एक दिन पूर्व पारसी पतेती पर्व मानते है। पारसी शब्द पतेती का मतलब है प्रायश्चित। इस दिन पारसी अपने मित्र- परिजनों से गुजरे वर्ष में हुई भूल और पाप के लिए क्षमायाचना करते है। गरिहामि और क्षमापना यानि कन्फेशन से व्यक्ति आत्मग्लानि और हीन भावना से मुक्त हो जाता है।

आत्म ध्यान के चिन्तक आचार्यश्री डॉ. शिव मुनिजी के अनुसार कन्फेशन सदगुरु के सामने ही करना चाहिए। इसके लिए किसी ऐसे व्यक्ति को खोजना चाहिए जो लहरों को नहीं, लहरों के नीचे छुपे समुद्र को देखता है यानि जो इतना गहरा हो कि आपके कर्म को नहीं, आपको देखें। जो आप उसे बताए वह अपने मन में छुपा ले। ऐसे सदगुरु को बता दो कि आप यहाँ- वहाँ फिसले और आपने यह किया, वह किया।

गरिहामि घर लौटने का रास्ता है। ध्यान साधना से आप भीतर के घर के द्वार तक तो आ गए, अब आपको एंट्री पास बताना है जो गरिहामि... Confession है।

श्री शिरीष मुनि कहते हैं कि आत्म ध्यान शिविर के लिए आलोचना सेशन पर विचार हुआ तो इस बात पर चिंतन हुआ था कि आत्म ध्यान के साधक का Confession Box क्या होगा। वहां वे किसके सामने अपने पापों को कबूल करेंगे? 'कर्मों से परे कर्ता को देख सके' ऐसी एक्सरे आईज कौन हो सकती है? जवाब मिला- साधक की ध्यानस्थ अवस्था... Confession Box है और एक्सरे आईज होगी साधक का इष्ट।

तदनुसार, आत्म ध्यान के आलोचना सेशन में कोई दर्शक या श्रोता नहीं होता। साधक से कहा जाता है- आँखे बंद करके सोचो कि आपका परमात्मा आपके समक्ष है। उन्हें नमन करो और अपना सारा जीवन एक खुली किताब की तरह

अपने श्रद्धेय के चरणों में रख दो। मौत आएगी तब यह अवसर मिले या नहीं यह सोचकर अपने सारे जन्मों में मन से, वचन से या काया से जो भी अनैतिक कर्म किए हैं वे सब अपने प्रभु के चरणों में रख दो।

अपने प्रभु से कहो-

-अपने पूर्व जन्म में और इस जीवन काल में कभी कारण से तो कभी अकारण, कभी होश में तो कभी बेहोशी में, कभी ज्ञान अवस्था में तो कभी अज्ञानतावश मैं बार बार गुस्सा हुआ। मैं आज उन सबकी आलोचना करता हूँ।

-अपनी धन- सम्पदा, सुख- सुविधा पद- प्रतिष्ठा जाति, कुल और विद्वता पर अपने अहंकार को आज मैं श्रीचरणों में अर्पित करता हूँ।

-इस जन्म या इसके पूर्व के जन्मों में मैंने मन, वचन और कर्म से जो माया की, करवाई या उसका अनुमोदन किया उन सबके लिए क्षमायाचना करता हूँ।

-हे प्रभो, किसी भी योनि में जहाँ भी, जब भी जिस प्रकार का मैंने लोभ किया है उसके लिए प्रायश्चित करता हूँ।

-हे प्रभो, अहंकारवश, अपने स्वाभिमान के लिए या अपने लाभ के लिए मैंने कई बार झूठ बोला है। मैं अपने गुनाह कबूल करता हूँ।

-मैं अनुरागी हूँ. मुझे अपने माँ-पिता, भाई- बहन, पत्नी और सन्तान, दोस्तों, व्यापार व्यवसाय से राग (लगाव) है। मैं द्वेष और दुर्भावनाओं का भी दोषी हूँ। आज मैं उन सबसे क्षमा याचना करता हूँ। मैं उनका भी अपराधी हूँ जिनके प्रति मेरे मन में दुर्भावना थी।

श्री शिरीष मुनिजी कहते हैं -

आत्म ध्यान शिविर के आलोचना सेशन में साधक को मौका मिलता है कि उसने अपने जीवन में पाप किया हो, हिंसा की हो, चोरी की हो, क्रोध किया हो, झूठ बोला हो तो अपने प्रभू को साक्षी बनाकर अपनी आलोचना कर ले। संकल्प ले कि जो किया वह भूल थी, वह पाप था, अब ऐसा कुछ नहीं करूंगा जिससे लोग क्रोधी कहे, झूठा कहे, लोभी कहे, अहंकारी कहे या मायावी कहे।

कायोत्सर्ग

काय और उत्सर्ग की संधि है कायोत्सर्ग। काय का अर्थ है काया (शरीर) और उत्सर्ग यानि छोड़ देना। तदनुसार, कायोत्सर्ग का शाब्दिक अर्थ हुआ शरीर को छोड़ देना।

आचार्यश्री डॉ. शिव मुनि कहते हैं- जैन दर्शन में कायोत्सर्ग एक तप है जिसका अक्सर अर्थ निकाला जाता है शरीर को छोड़कर मरण का वरण कर ले। यह सही नहीं है। कायोत्सर्ग का अर्थ है इस भाव को छोड़ देना कि मैं ही शरीर हूँ और शरीर ही मैं हूँ। शरीर से ऊपर उठ जाएँ तो समस्त सम्बन्धों और ममत्वों से मुक्त हो जाते हैं। शरीर ही तो समस्त मोह- माया और ममत्व का मूल है। तदनुसार शरीर अलग है और आत्मा अलग है यह भेद करना कायोत्सर्ग है। यही ध्यान का सर्वोपरी लक्ष्य है। आत्म ध्यान साधक ही इस सत्य की अनुभूति कर सकता है कि मैं शरीर नहीं हूँ।

जैन दर्शन के तप कायोत्सर्ग को लेकर जैन धर्मावलम्बियों में भी भ्रम है। वे इसे आध्यात्मिक क्रिया मानने लगे हैं और सोचते हैं कि कायोत्सर्ग केवल प्रतिक्रमण और सामायिक लेते हुए किया जाता है या हो जाता है। शेष जीवन के साथ इसका कोई सम्बन्ध नहीं है। वे यह भी मानने लगे हैं कि कायोत्सर्ग करेंगे तो पुण्य अर्जन होगा, परमात्मा प्रसन्न हो जाएँगे। सच यह है कि कायोत्सर्ग जीवन से जुड़ा हुआ सूत्र है जो रोजमर्रा के तनाव को तोडने का उपाय है। कायोत्सर्ग तप को समझने के पहले तनाव को समझना होगा।

तनाव आखिर है क्या? अपने तनाव के क्षण याद करें... आपके हाथ-पांव, आपके चेहरे और शरीर में तब अकड़न और जकड़न हुई होगी। आपकी सहजता और सरलता, आपकी तरलता और ताजगी खो गई होगी। यह सब होता है तनाव की वजह से। तनाव बाहर से नहीं आता। यह हमारे भीतर से प्रकट होता है। जब आप मुठ्ठी बंद करना चाहते हैं तो हाथ में आपको कुछ तनाव पैदा करना पड़ता है, ताकत लगाना पड़ती है। बंद मुठ्ठी खोलना हो तो कुछ नहीं करना पड़ता। जो तनाव पैदा किया था उसे ढीला छोड़ दें, मुठ्ठी अपने आप खुल जाएगी।

स्पष्ट है कि जहाँ- जहाँ हम कुछ बांधना चाहते है, कुछ पकड़ना चाहते हैं, वहां-वहां तनाव आ जाता है। हम धन को पकड़ते है, परिवार को पकड़ते है या किसी अन्य को पकड़ते हैं कि तनाव आ जाता है। पकड़ तनाव का मूल है।

लोग अक्सर कहते हैं- इच्छा नहीं जागना चाहिए। आचार्यश्री डॉ. शिव मुनि कहते हैं- इच्छाएँ जगें तो जगने दीजिए पर यह जिद न करे कि इच्छाएँ पूरी होनी ही चाहिए। यह जिद ही सारे झंझट और संधर्ष का कारण है। इच्छा जगे तो उसे पूरा करने के प्रयत्न भी करें। पूरी हो जाए ठीक और पूरी न हो तो भी ठीक। जब हम इच्छा पूरी करने की जिद करने लगते हैं तो तनाव शुरू हो जाता है। जिद के बाद भी इच्छा पूरी नही होती है तो तनाव डिप्रेशन और फ्रस्ट्रेशन में बदल जाता है। तनाव से बचने का सबसे सहज मन्त्र है- यह मान लो कि जो हुआ, वह अच्छा और जो नहीं हुआ, वह उससे भी अच्छा। क्यों? क्योंकि परमात्मा यही चाहता है।

श्री शिरीष मुनिजी कहते हैं-

तनाव, डिप्रेशन और फ्रस्ट्रेशन के उपाय के रूप में आचार्यश्री डॉ. शिव मुनि ने आत्म ध्यान शिविर में कायोत्सर्ग साधना को शामिल किया।

आत्मध्यान शिविर में कायोत्सर्ग सेशन की शुरुआत इस निर्देश से होती है कि साधक नख से शिख तक शांत और शिथिल हो जाएँ। चेतना और शरीर तथा आत्मा और शरीर के जुड़े होने की अनुभूति करे। यानि शरीर को शव मान ले। अब ध्यान करे...

आपका मृत शरीर भूमि पर लिटा दिया गया है। नाते रिश्तेदार उसके चारों और बैठे हैं। वे रो रहे हैं, चिल्ला रहे हैं। रुदन के बीच ही सबको शमशान ले जाने की हड़बड़ी है। आपको जो दिलो-जान से चाहते थे वे अब थोड़ी देर भी घर में रखना नहीं चाहते। आपके कपड़े केंची से फाड़कर शव का अंतिम स्नान होता है, कफन ओढा दिया है, बाँस की पेढ़ी पर शव बांध दिया है। चार कंधों पर सवार होकर आप शमशान पहुँच गए हैं। वहाँ लकड़ियों के ढेर पर आपको रख दिया गया है। आपका

पुत्र, पति, पिता या कोई और रिश्तेदार चिता को अग्नि देता है। आप जलने लगते हैं। अभी आप पूरी तरह जलते भी नहीं हैं कि नाते- रिश्तेदार और मित्र-परिजन घर लौट आते हैं. आपका साया पीछे न पड़ जाए इसलिए वे परम्परागत क्रिया-कर्म करते हैं। अब आप एक तस्वीर के रूप में घर की एक दीवार पर लटका दिए गए हैं। कुछ दिन आपकी तस्वीर पर फूलों या चन्दन का हार होता है और फिर धुल मिट्टी। फिर एक दिन दीवार से भी उतारकर आपको घर के कबाड़ में डाल दिया जाता है। अपने घर में, अपने रिश्तेदारों के लिए आपका बस इतना ही अस्तित्व है।

कभी आपने सोचा कि कफन की जिंदगी भी मुर्दे के दाह संस्कार तक ही होती है?

इसके बाद कोई उसे याद भी नहीं रखना चाहता। कफन की चाहत भी कोई नहीं रखता। लेकिन उसे ओढना सब की मजबूरी है।

कफन में कोई जेब नहीं होती तो इतना कमा कर भी रखोगे कहाँ? कहाँ लेकर जाओगे? सब ठाठ यहीं पड़ा रह जाएगा। किसी शायर ने इसका खुलासा किया है- क्या करोगे इतना पैसा कमाकर, ना कफन में जेब है ना कब्र में आलमारी।

कफन की कोई विचारधारा भी नहीं होती. वह सत्य के माफिक बेदाग और बिन सलवटों के होता है।

ध्यान का साधक यह सचाई अपने जीते जी समझ जाए इसलिए आत्म ध्यान शिविर में कायोत्सर्ग तप करवाया जाता है। यह साधना करके उसे आभास हो जाता है कि यह संसार नि:सार है, असत्य है। हमारा शरीर जिन जिन लोगों या पदार्थों से ममत्व के रिश्ते बनाता है वे भी शमशान में अकेला छोड़ जाते हैं। हर जन्म में हर योनि में सबके साथ यही हुआ है, यही होगा।

अब आपको सोचना है कि किसे प्राथमिकता दें।

- शरीर से जुड़े रहें या शरीर से ऊपर उठकर मुक्ति के पथ पर अग्रसर हो?

- क्या जीवन भर महावीर की स्तुति करते रहना है या स्वयं महावीर बनना है?

- सुबह उठकर माला करने, सामायिक (पूजा अर्चना) करने, मन्दिर जाने से मोक्ष मिल जाएगा? इसके लिए तो भगवान महावीर और बुद्ध को कठोर तप करना पड़ा था। क्या आप तैयार हैं? क्या कहने या सोचने मात्र से मोक्ष मिल जाएगा?

मोक्ष कैसे मिलेगा यही पथ बताता है आत्म ध्यान।

सुकरात का नाम हम सबने सुना है। कहते हैं कि जब दोपहर का सूर्य मध्य आकाश पर होता तब सुकरात अपनी लालटेन जलाकर बाजार में निकलते थे। भीड़ भरे बाजार में वे कुछ खोजते। लोग पूछते- महात्मन, आप क्या खोज रहे हैं? सुकरात कहते- आदमी। सुकरात का जवाब सुनकर लोग हंसते, उन्हें पागल कहते और आगे बढ़ जाते।

आज की तरह तब भी बहुत कम लोग सुकरात की बात का मर्म समझ पाए थे। सत्य को समझना और स्वीकार करना हमेशा ही कठिन होता है। सुकरात का आशय था- भीड़ तो बहुत है पर भीड़ में वह आदमी खोजने से भी नहीं मिलता जो स्वतंत्र हो। जो बंधा हुआ नहीं हो। जो अपने बन्धनों को पहचान कर खुद ही उन्हें तोड़ दे और निर्बंध हो जाए। ऐसा निर्बंध आदमी ही वास्तव में आदमी है, शेष तो बस परम्पराओं और पूर्वाग्रहों की बेड़ियों में जकड़ी भीड़ है।

बीसवीं सदी के ख्यात अमेरिकन मनोवैज्ञानिक ए.एच मैसलो ने अंग्रेजी शब्दावली को एक शब्द दिया है सेल्फ- एक्चुअलाइजेशन (स्व का बोध). इसका सरलतम हिंदी रूपांतरण है खुद को जानो।

सांसारिक नजरिए से खुद को जानना आसान है। आपका एक नाम है, आपका एक धर्म है, आपका एक व्यापार है जिनसे आप खुद को जानते है और चाहते हैं कि लोग उनसे ही आपको जाने।

अध्यात्म के नजरिए से यह आपकी पहचान नहीं है, बल्कि यह आप है ही नहीं। आत्म ध्यान के अन्वेषक शिवाचार्य कहते हैं कि मनुष्य तो एक बीज है। जो दिखता है वह है ही नहीं। बीज खुल जाए तो वृक्ष बन जाता है अन्यथा उसका होना न होना कोई मायने नहीं रखता। मनुष्य के साथ भी यही हो रहा है। जिन्होंने खूब धन कमाया, ऊँचा पद और प्रतिष्ठा पाई वे भी महसूस करते हैं कि सब मिला पर कुछ

खो गया। यह खोने का भाव ही दर्शाता है कि बीज ने सम्भावना का दोहन नहीं किया। मनुष्य वास्तविक नहीं हुआ। क्यों नहीं हुआ और अब कैसे हो सकता है इन सवालों का जवाब है आत्म ध्यान।

आत्म ध्यान साधना करेंगे तो आप खुद को खोजेंगे। आत्मध्यान आत्म निरीक्षण और आत्म परीक्षण है जो आत्मविश्वास और आत्मबल बढ़ाता है।

एक खोजी ने एक दिन भगवान को खोज लिया। वह भगवान से बोला- प्रभु, आपने खूब दिया। जीवन दिया, जीवन में आनन्द दिया। अब एक ही इच्छा है। कुछ सेवा करवा ले। मैं जानता हूँ आपको किसी चीज की जरूरत नहीं है लेकिन मेरा मन रह जाएगा कि मैं प्रभु के लिए कुछ कर सका। भगवान ने कहा- भक्त, नहीं कर सकोगे। भक्त जिद पर अड़ गया तो भगवान बोले- ठीक है, मुझे प्यास लगी है। भक्त ने सोचा- भगवन ने बड़ा आसान काम बताया है। वह दौड़ पड़ा. उसने एक दरवाजे पर दस्तक दी. एक सुंदर युवती ने दरवाजा खोला तो भक्त ने कहा- देवी मुझे एक गिलास शीतल जल दे दीजिए. उस युवती ने कहा- आइए आप भीतर तो आइए. मेरे पिता बाहर गए हुए है। वे आएंगे तो नाराज होंगे कि थका और प्यासा अतिथि आया था और मैंने उसे बाहर से ही रवाना कर दिया। भक्त ना- नुकर करने लगा तो उस सुंदर युवती ने उसका हाथ पकड़ लिया और बोली- मैं आपको जाने नहीं दूंगी। आपको जल तो दूंगी पर पहले जलपान करना होगा। भक्त ने नाश्ता किया तो युवती बोली- अब आप थोड़ी देर विश्राम कर लें, मेरे पिता आते ही होंगे। उनसे मिलकर जाइएगा। भक्त का मन अब भगवान को भूलने लगा था। वह रुक गया। उस युवती ने स्वादिष्ट भोजन बनाया। भोजन करने के बाद बोली- अब रात में कहाँ जाइएगा। भक्त ने सोचा सुबह भोर होते ही निकल जाऊंगा। वह उस रात वहां रुका। सुबह युवती ने कहा- मेरे पिता तो नहीं आए। आप गाय का दूध निकाल दे। बाजार से थोडा सामान ला दें। मैं आपके लिए भोजन बनाती हूँ। इसके बाद वर्षों बीत गए। भक्त भगवान को भूल गया। गाँव में बाढ़ आई। वह भक्त जान बचाने के लिए एक पेड़ पर चढ़ गया। वहां उसने देखा कि भगवान बैठे है। उन्होंने कहा- मैं अभी तक प्यासा हूँ, तुम पानी नहीं लाए। हम यही कर रहे हैं। संसार छोडकर भागते हैं पर संकल्प मजबूत न हो तो फिर संसार में ही लौट आते हैं।

अध्याय - 3

आत्म ध्यान के आलम्बन

अन्य ध्यान पद्धतियों की तरह आत्म ध्यान साधना के भी आलम्बन है- श्वास, मन और मौन। मौन अवस्था में श्वास विचरण के प्रति दृष्टा भाव से ही आत्म ध्यान सम्भव है। शर्त है, मौन वास्तविक होना चाहिए, श्वास विचरण पर चौकसी सहज होना चाहिए और सारे उपद्रव की जड़ मन पर कड़ा नियन्त्रण होना चाहिए। यह असाध्य नहीं, साध्य है।

श्वास विचरण के प्रति दृष्टा भाव

हम जन्म से मृत्यु तक निरंतर साँस लेते हैं। जन्म लेते हैं, जवान होते हैं, प्रौढ़ और वृद्ध होते हैं, सुखी होते हैं, दुखी होते हैं, धनी होते हैं या निर्धन होते हैं, सफल होते हैं, असफल होते हैं, रुग्ण होते हैं या थक जाते हैं- आयु और आय के साथ सब कुछ बार-बार बदलता है, पर जो जन्म से मृत्यु तक नहीं बदलता, वह है साँस का आवागमन। यदि एक क्षण भी श्वांस लेना भूल जाएँ तो सब कुछ समाप्त हो जाए। विधाता ने इसलिए हमारी श्वास का जिम्मा हमें नहीं सौंपा। यह नहीं होता तो मुश्किल हो जाती। हम श्वास लेना भूल जाते और फिर कुछ भी नहीं बचता।

श्वास क्रिया और जीवन एक दूसरे से जुड़े हुए हैं इसलिए इसे हम प्राण भी कहते हैं। प्राण का अर्थ है जीवन शक्ति। इसे यूँ भी समझना चाहिए कि भीतर आनेवाली प्रत्येक श्वास पुनर्जन्म है। बाहर जाने वाली श्वास मृत्यु है। प्रत्येक श्वास के साथ हम मरते हैं और फिर फौरन जन्म लेते हैं। आत्मध्यान के साधक को इसीलिए बार बार याद दिलाया जाता है कि आने- जाने वाली श्वास के प्रति जागृत रहे। श्वास

का यात्रा पथ देखें और सब कुछ भूल जाएँ। जब श्वास नासापुटों को स्पर्श करे तो उसे महसूस करें। श्वास से कदम मिलाकर चलें, न आगे, न पीछे। उसका साथ न छूटे। श्वास को चलने दें पर सजगता के साथ।

आपको महसूस होगा कि बाहर आने वाली श्वास और भीतर आने वाली श्वास एक वर्तुल बनाती है। यह भ्रम है कि दोनों श्वास समानांतर रेखा की तरह है। भीतर आने वाली श्वास आधा वर्तुल बनाती है तो शेष आधा वर्तुल बाहर निकलने वाली साँस बनाती है।

इसे कार ड्रायविंग से समझें. जो मोटर कार चलाते हैं वे जानते हैं कि गियर बदलते समय हर बार न्यूट्रल गियर से गुजरना पड़ता है। न्यूट्रल गियर केवल घुमाव का बिंदु है, मोड़ है। यह गियर नहीं है। ऐसे ही जब श्वास भीतर जाती है और घुमने लगती है उस वक्त वह न्यूट्रल गियर में होती है। उसे एक तटस्थ क्षेत्र से गुजरना पड़ता है।

शरीर हमारे अस्तित्व का गियर है तो मन उसका दूसरा गियर है। हम एक गियर से दूसरे गियर में घूमते हैं तब हमें न्यूट्रल गियर की जरूरत पडती है। जब शरीर न हो और मन भी न हो। मात्र हो शरीर और मन से मुक्त अस्तित्व। श्वास के प्रति यह बोध जैसे- जैसे गहरा होगा, सघन होगा वैसे- वैसे आत्म बोध स्पष्ट आकार लेगा। आत्म ध्यान इसी तटस्थ क्षेत्र की खोज है। वह बिंदु जब हम शरीर न हो और न ही मन हो।

श्वास तुम्हारे और तुम्हारे शरीर के बीच सेतु है। तुम शरीर को तो जानते हो, लेकिन यह नहीं जानते कि केंद्र कहाँ है? श्वास नाभि केंद्र को जाती है फिर वहीं से लौटती है और फिर इसी यात्रा को दोहराती है। जब हम गहरी साँस नहीं लेते है तो वह केंद्र तक नहीं पहुँचती है। इसे भी एक उदाहरण से समझें...

एक सोए हुए बच्चे की श्वास भीतर जाती है तो उसका पेट उपर उठता है, छाती नहीं। श्वास-प्राश्वस के साथ पेट उपर नीचे होता है तब बच्चा अपने केंद्र पर होता है। केंद्र में होने से बच्चे प्रसन्न रहते हैं, वे थकते नहीं हैं। वे सदा वर्तमान में होते हैं, उनका न अतीत होता है और न भविष्य।

हम भी बच्चे थे तब गहराई तक श्वास लेते थे। अब श्वास पेट तक नहीं जाती। नाभि केंद्र को नहीं छूती। वह सीने को छुकर ही लौट आती है।

श्वास जब पूरी तरह भीतर गई हो या बाहर आई हुई हो- इस विराम के क्षण में व्यक्ति का अहंकार विसर्जित हो जाता है। ऐसा हम सबके साथ होता है पर हमें इसका आभास नहीं होता है। आइए, इसे भी उदाहरण से समझें...

आप कार चला रहे हैं और अचानक वह क्षण आ जाता है जब लगता है कि दुर्घटना होने वाली है। श्वास बाहर है तो बाहर और भीतर है तो भीतर ही रह जाती है। इस क्षण हम अपना पद, पैसा, पॉवर सब भूल जाते है। सारा अंहकार विसर्जित हो जाता है और बोल उठते है- Oh God! Save Me. बाप रे ! बचा लो।

स्पष्ट है कि जब हम श्वास लेते हैं तो श्वास को अनुभव नहीं करते। श्वास भीतर जाती है पर हम इसके स्पर्श को नहीं जानते। श्वास को नहीं पहचानते। लेकिन जब कोई अड़चन आती है तो श्वास को जानते हैं।

श्वास के इस अदभुत केंद्र तक पहुचने के लिए महावीर ने 12 वर्ष तप किया तब वे अरिहंत बने। अरिहंत का मतलब है ऐसी आत्मा जिसने मोह-माया, राग- द्वेष, काम-क्रोध और लोभ-लालच को जीत लिया हो।

A soul who has conquered inner passions such as attachment, anger, pride and greed.

यही आत्म ध्यान का लक्ष्य है।

आत्म ध्यान के अन्वेषक शिवाचार्यजी ने श्वास के अहसास की जो सहज विधि खोजी है वह है- सोऽहं।

हर रोज अब जब भी मौका मिले तब सोऽहं के आलम्बन के साथ कम से कम एक मिनट तक गहरी श्वांस लें। ऐसा करते समय महसूस करें कि श्वांस आपके रोम-रोम, आपके अंग- अंग में समा रही है। जब ऑफिस में थक जाएँ या उबने लगें तो एक गहरी श्वांस लें। किसी बड़े व्यक्ति से मिलने जा रहे हैं, किसी उलझन में हैं, तनाव में हैं, या मंच से बोलना हो तो एक गहरी श्वांस लें। आप पाएँगे कि एक

मिनट की गहरी श्वांस ने अपने अंतर्मन की उलझन और तनाव को कम कर दिया है और आप जो हालात हैं उसके अनुरूप व्यवहार करने, उसका सामना करने के लिए तैयार हैं।

हर गहरी श्वांस आपके अंतर्मन को, आपके आत्मबल को यानि आपके आत्मविश्वास को मजबूत करती है।

मन को मालिक न बनने दे, मन के मालिक बने

हमारी पांच प्रत्यक्ष इंद्रियां हैं- आंख, कान, नाक, जीभ और स्पर्श। छठी अप्रत्यक्ष इन्द्रिय है- मन। अन्य इन्द्रियों की तरह मन भी शरीर का अभिन्न अंग है। शरीर को कुछ भी होता है तो उसकी जड़ें मन में होती है, असर शरीर पर दिखाई देता है। चिकित्सक इसीलिए कहते हैं कि मन को मजबूत करो, रोग जल्दी ठीक हो जाएगा। चिकित्सकों से पहले भारतीय दर्शन ने यह बात समझ ली थी इसलिए ध्यान की खोज हुई।

हमारी पंच इन्द्रियों और मन में एक बड़ा फर्क है। आंख, कान, नाक, जीभ और स्पर्श हमें जन्म से मिलती है, पर मन सामाजिक उपज है। यह हमें जन्म से नहीं मिलता है। यह हमे दिया गया है। हम पर लाद दिया गया है। इसके क्रिएटर है माँ-बाप, टीचर, मित्र रिश्तेदार। जिस तरह हमारा लालन- पालन होता है, शिक्षा मिलती है, संगी- साथी मिलते हैं वैसा हमारा मन हो जाता है। बड़े होते हैं तो अनुभव जिसे अतीत कह सकते हैं वह हमारे मन को बनाता और बिगाड़ता है। इसे एक उदाहरण से समझें...

हम मनुष्य पैदा हुए हैं पर हिन्दू, मुस्लिम, सिख या ईसाई बना दिए गए। यह धर्म हमें परिवार या समाज से मिला है या कहें कि हम पर तब ही लाद दिया गया जब हम नासमझ थे।

जो कुछ थोपा गया है उसे भूलकर, अतीत को भूलकर, भविष्य को भूलकर, वर्तमान में लौटने और फिर से वही जन्मवाले मनुष्य बनने का जब हम प्रयत्न करते हैं तो मन उपद्रव करने लगता है। मन को मूल में लौटना रास नहीं आता। क्यों? क्योंकि वह कंडिशन्ड (संस्कारित) हो चुका है।

मन एक विचार से दूसरे विचार की ओर सतत यात्रा करता है पर कहीं नहीं पहुँचता है। मन की संरचना ही गतिमय है। यही मन का स्वभाव है अगर बुद्धि के बल पर हम किसी बिंदु पर टिकने की कोशिश करते हैं तो भी मन बाधा बन जाता है। मन की इस जिद के दोषी हम हैं। हमने अपने मन पर कभी नियन्त्रण रखा ही नहीं। हम कभी मन के मालिक बने ही नहीं। हमने मन को मन ही मन इतनी स्वतन्त्रता दे दी कि मन स्वामी बन गया और हम मन के सेवक।

आप ध्यान करना चाहते हैं तो मन बहाने बनाता है। वह कहता है- समय कहाँ है? अभी सम्भव नहीं है। समय मिलेगा तब करेंगे। मन जो कहता है उससे सावधान रहें। मन का बहुत भरोसा मत करो। यह ही हमें भटकाता है। यह ही लोभ लालच पैदा करता है। यह ही सफलता के अनैतिक शार्ट कट बताता है। जब भी संदेह करना हो तो सबसे पहले अपने मन पर संदेह करें। मन कुछ करने को कहे तो दो बार सोचें। ध्यान करना चाहें और मन कहे समय कहाँ है तो सोचें? मन कहेगा- अभी जीवित रहने के लिए ध्यान जरूरी नहीं है। क्यों? क्योंकि ध्यान में उतरोगे तो मन छुट जाएगा। मन बहुत बुद्धिमान है। वह जानता है ध्यान मेरी मृत्यु है। मेरी लगाम है। ध्यान से मन इसीलिए डरता है। कहता है अभी नहीं, फिर कभी।

मन के साथ एक और झंझट है- अनंत भूख। मन का भोजन है विचार। जैसे किसी पेड़ में फल- फुल और पत्ते उगते है वैसे ही मन में विचार उगते हैं। मन को एक प्रश्न मिल गया तो वह उससे कई प्रश्न पैदा कर लेगा। बट्रेंड रसेल ने कहा है कि मैं बच्चा था तो सोचता था कि बड़ा हो जाऊंगा तो मेरे सारे प्रश्न हल हो जाएँगे, पर अब मैं अस्सी का हो गया हूँ नए पुराने प्रश्न वैसे ही खड़े हुए हैं।

मन के साथ दूसरा झंझट है एक अति से दूसरी अति की ओर दौड़ना। घड़ी के पेंडुलम की तरह मन सारे दिन चलता रहता है। कभी दाएँ, कभी बाएँ। जो गरीब है उसका मन धन के पीछे भागता है। जो अमीर है वह फकीर जैसी मस्ती मांगता है।

डॉ. शिव मुनिजी कहते हैं मन से मुक्ति की कोशिश है आत्म ध्यान। यह बोध करवाने का प्रयास है कि मन से परे शरीर में आत्मा है जो स्वयं परमात्मा है। एक बार आत्मा से साक्षात्कार हो जाए तो महसूस होता है कि मन ने बेकार ही प्रपंचों में उलझा रखा था, भीतर से तो हम आकाश की तरह शून्य हैं। शून्य का आभास होते

ही सारे भय भाग जाते हैं। शून्य मरता नहीं है। आकाश गुम नहीं होता है। बादल उसे थोड़ी देर छुपा सकते हैं। यही हमारे साथ हुआ है। बाह्य जगत ने हमारे भीतर समाई आत्मा को ढंक लिया है, छुपा दिया है। वह गुम नहीं हुई है। उसे खोजना भर है। उस तक पहुँचना है फिर सब नए सिरे से नया हो जाएगा।

आत्म ध्यान से बाहरी घेरों के साथ मन की दासता से भी मुक्ति मिल जाती है। मन गया कि अतीत गया। कोई बंधन नहीं रहे, कोई भविष्य नहीं रहा। जो है वर्तमान है। शाश्वत वर्तमान।

संक्षेप में कहें तो मन का अर्थ है विचारणा और अ-मन का अर्थ है निर्विचार। ध्यान में मन है ही नहीं। यह अ-मन की अवस्था है। यही कारण है कि ध्यान को मन नहीं समझता या ध्यान को मन से नहीं समझा जा सकता। यही नहीं, मन ध्यान के समय इसीलिए सबसे ज्यादा उपद्रव भी करता है। कबीर ने कहा तो है-

कबीर यह मन मसखरा, कहूँ तो माने रोस,

जा मारग साहिब मिले, तहाँ न चाले कोस।

(यह मन बहुत चुलबुला है। इसे समझाने का प्रयत्न करो तो बुरा मानता है। जिस साधना से परमात्मा का साक्षात्कार हो सकता है उस ओर चलने को तैयार ही नहीं होता।)

मौन

भगवान महावीर की साधना का मूलाधार मौन था। साढ़े बारह साल की साधना में वे मौन रहे। अति आवश्यक हुआ और किसी ने पूछा तो वे इतना ही बोले- मैं भिक्षु हूँ। इस मौन से ही उनकी उर्जा का संग्रहण हुआ और वे महावीरत्व को प्राप्त हुए, अरिहंत बने।

मौन का अर्थ केवल चुप्पी नहीं है। चुप्पी में हम किसी दूसरे से नहीं बोलते हैं पर वास्तविक मौन तब है जब हम खुद से भी बोलना बंद करें। मौन तो सत्य की खोज है। परेशानी यह है कि यह कभी बंद नहीं होती। जब हम सोचते हैं, विचार करते हैं

तब भी चुप नहीं होते। अपने आप से बात करते हैं। खुद से बात किए बिना विचार नहीं कर सकते।

जो लोग मौन का अभ्यास करते हैं वे सिर्फ बाहर से बातचीत बंद कर देते हैं। यह चुप्पी है मौन नहीं। क्योकि भीतर तो विचार चल रहे हैं। अंतस से बात हो रही है। भीतर से मौन के लिए मन का शांत होना जरूरी है।

आपने यह कहावत सुनी है- क्या मुंह में दही जम गया है। यदि मुंह में वाकई दही जमाने का इंतजाम होता तो जीवन शांत हो जाता। डॉ. शिव मुनिजी कहते हैं कि अगर मुंह के साथ मन में दही जमाने का इंतजाम हो जाए तो जीवन ही नहीं दुनिया में शांति हो जाए।

जैन दर्शन ने मौन पर सबसे ज्यादा चिन्तन हुआ है जिसका निष्कर्ष है- बोलने से मनुष्य की शक्ति का सबसे ज्यादा ह्रास होता है। जैन साहित्य में आयुष्य का तो माप ही श्वासोच्छवास है। मनुष्य जितना तेज चलता है, जितना ज्यादा और जितना जोर से बोलता है, जितना ज्यादा सोता है, जितना ज्यादा भोग विलास करता है, जितना ज्यादा व्यसनों में संलग्न रहता है उसकी सांस उतनी तीव्र गति से खर्च होती है। साँस सबको उनके कर्म अनुसार मिली है। जल्दी खर्च कर देंगे तो जल्दी मर जाएँगे। इस तत्व को विज्ञान ने भी मान लिया है। विज्ञान कहता है कि जो जितना अधिक बोलता है वह उतनी ही जल्दी मरता है।

यही कारण है कि आत्म ध्यान साधना के दौरान मौन रखा जाता है। दूसरों से न बोलने, इशारों से या लिखकर बात न करने की सलाह दी जाती है। यह समझाया जाता है कि मन की चंचलता बंद हो जाएंगी तो आप अचल और थिर हो जाएँगे यानि ठहर जाएँगे। जब अचल हो जाएँगे तो शाश्वत के नजदीक पहुँच जाएँगे। विचारों में आप अपने शरीर और मन के साथ होते हैं तो निर्विचार में आप शाश्वत के संग और अंग हो जाते है। सारी बेचैनियाँ और परेशानियाँ स्वयंमेव दूर हो जाती हैं। ख़ामोशी कितना रोमांचक रहस्य है इसे एक कहानी से समझें...

एक जहाज समुद्र में डूबा। उसके सारे यात्री डूब गए। एक यात्री तैरते हुए एक निर्जन टापू पर पहुँच गया। वह प्रतीक्षा करने लगा कि कोई उसे बचाने आएगा।

कई वर्ष हो गए तो वह प्रतीक्षा करना भी भूल गया। फिर एक दिन एक जहाज वहाँ से गुजरा। उस एकांत निर्जन टापू पर उस आदमी को देखकर जहाज के कप्तान ने कुछ लोगों को वहाँ उतारा। जब उन लोगों ने उस आदमी की आपबीती सुनी तो कहा- चलो, हम तुम्हें तुम्हारी दुनिया में लौटा देते हैं। वह शक्स सोच में पड़ गया तो उन लोगों ने कहा- चलना है या नहीं? उस आदमी ने कहा- अगर तुम्हारे जहाज पर कुछ अखबार हो तो पहले मैं उन्हें देख लेना चाहता हूं। इसके बाद बताऊंगा कि चलना है या नहीं। अखबार देखकर उसने कहा- , तुम अपनी दुनिया में रहो। मैं यहीं रहूँगा। वे लोग हैरान हुए। उनकी हैरानी देखकर उस आदमी ने कहा- इन वर्षों में मैंने यहाँ जिस शांति, जिस मौन और जिस आनंद को जीया है उसका मैंने जीवन के पचास वर्षों में कभी अनुभव नहीं किया था। यह तो परमात्मा की असीम अनुकंपा है कि तूफान में जहाज उलट गया और मैं यहाँ आ गया। यदि मैं यहाँ नहीं आया होता तो मुझे कभी पता नहीं चलता कि खामोशी कितनी रोमांचक होती है। मौन में कितना सुख, कितनी उर्जा है।

मौन साधना करें आपको भी वैसा ही टापू मिल जाएगा जहाँ आप होंगे और होगी आपके साथ आपकी आत्मा यानि परमात्मा...

अध्याय - 4

आत्मा के लिए शरीर का उपयोग है आत्म ध्यान

श्री शिरीष मुनिजी कहते हैं:

दुनिया में दो तरह के मनुष्य हैं। एक बगुला और दूसरा हंस। बगुला समुद्र के किनारे ध्यान लगाने का पाखंड करके मछली पकड़ता है, बगुला भौतिकतावादी है। इस किस्म के मनुष्य की सोच सुख सुविधा तक सिमटी होती है। उनके लिए भोग ही सुख और आनन्द है। ऐसे लोग जीवन जीते नहीं, ढ़ोते हैं।

हंस मोती खोजने के लिए बार बार डुबकी लगाता है। हंस किस्म के मनुष्य शाश्वत सुख और आनन्द चाहते हैं। ये ही आत्मध्यान के वास्तविक पात्र और हकदार हैं। आत्म ध्यान की साधना से इन्हें मिलता है अनंत ज्ञान, अनंत सुख और अनंत शक्ति। इसके बाद वे इस लोक में शांत जीवन जीते हैं तो जन्म जन्मान्तर के चक्र से भी मुक्त हो जाते हैं।

अन्य ध्यान पद्धतियाँ मन वचन और काया तक सीमित हैं जबकि आत्म ध्यान उर्जा के उस भीतरी स्रोत की खोज है जो हम सबकी देह में बीज की तरह मौजूद है। हमारी देह हमारा वास्तविक होना नहीं है। यह खोल मात्र है। वैसे ही जैसे बीज के ऊपर खोल होती है। बीज की सख्त खोल में अंकुर है बहुत कोमल. बीज माटी में दबता है, गलता है फिर अंकुर में बदलता है। अंकुर से पौधा और वृक्ष बनता है। जब तक बीज वृक्ष नहीं बनता तब तक एक सम्भावना है। हमारी देह भी बीज है। अंकुर इसके भीतर है जिसे आत्मा कहते हैं। जब अंकुर फूटता है तो मनुष्य वृक्ष बनता है।

बीज वृक्ष के आनन्द को नहीं जानता। बीज कैसे जान सकता है कि हवा में प्राण वायु आक्सीजन है, सूरज की किरणों में उर्जा है, बरसात की फुवारों में जीवन की खुशबू है। वृक्ष पर फूल खिलते हैं, भंवरे गुनगुनाते हैं, पक्षी गाते हैं और यात्री विश्राम करते हैं। वृक्ष के इस आनंद को, इस अनुभव को बीज नहीं जान सकता।

हमने हमारी देह, हमारी खोल को ही जीवन समझ लिया है और भीतर छुपे अंकुर को नहीं देखा है। आत्म ध्यान साधना बीज से वृक्ष बनने की यात्रा है। हमारे भीतर जो सत्य है, शक्ति है, क्षमता है उसे निखारने और तराशने की यात्रा है। यही महावीर ने किया था, यही बुद्ध ने किया था।

आत्म ध्यान की पहली शर्त है निर्विचार। आत्म ध्यान के शुरुआती साधक के लिए उपयुक्त है ऐसा स्थल जहाँ शोर गुल न हो। एकांत होगा तो ध्यान नहीं भटकेगा। ध्यान साधना के अभ्यस्त होने के बाद तो साधक कहीं भी कभी भी ध्यानस्थ हो सकता है।

आत्म ध्यान का सबसे उपयुक्त समय है प्रात:काल। आवश्यक क्रियाओं के बाद बिना स्नान भी ध्यान किया जा सकता है। ध्यान पूजा नहीं है। जिस तरह संगीत का कोई धर्म, भाषा या रंग रूप नहीं होता वैसे ही आत्म ध्यान कभी भी कर सकते हैं। इसकी धुरी है देह में मौजूद आत्मा, जो सबको मिली है, यह सुप्त भी नहीं हैं, बस हम इसे भूल गए हैं।

स्व की यात्रा यानि आत्म ध्यान अपनी ही आत्मा से अपना साक्षात्कार है। आत्म ध्यान के अभ्यस्त हो जाए तो दिन में तीन बार 20 मिनट ध्यानस्थ होकर खुद को वैसे ही रिचार्ज करें जैसे अपने मोबाईल फोन को रिचार्ज करते हैं। प्रात:काल आत्म ध्यान करने से दोपहर तक उर्जा बनी रहेगी। मध्यान्ह भोजन के पूर्व 20 मिनट ध्यानस्थ होंगे तो शाम तक उर्जावान बने रहेंगे। दुकान- दफ्तर से लौटने के बाद ध्यान करेंगे तो सोने तक प्रसन्न रहेंगे। गहरी नींद लेंगे। आत्मध्यान के साधक कहते हैं कि रात को सोने के पहले ध्यान करते हुए उन्हें नींद आ गई अन्यथा वे अनिद्रा से परेशान रहते थे। यह योग निद्रा है। जो साधक रात को ध्यान करते हुए नैसर्गिक निद्रा में चले जाते है वे पूरी रात ध्यान अवस्था में होते है। तदनुसार, अनिद्रा से परेशान लोगों के लिए आत्मध्यान नेचरल स्लिपिंग टेबलेट है।

सुबह जागे तो अपनी आँख खोलने से पहले शरीर को तानें। तीन या चार मिनट आँख बंद रखे और हँसे- मुस्कुराए। यह हँसी दिन भर आपके साथ रहेगी। आप जहाँ होंगे जो भी करेंगे हँसते हँसते करेंगे। दिन भर खुद भी हँसेंगे और लोगों को भी हँसाएंगे। खुशमिजाज लोगों को सब पसंद करते हैं। आत्म ध्यान की साधना करें और सबके चहेते बने।

आत्मध्यान मनोरंजन नहीं है, आत्मरंजन है। मनोरंजन के सारे साधन पहले सुख देते हैं फिर उबाने लगते हैं। आत्म ध्यान शुरू में कठिन लगता है पर बाद में स्थायी आनंद और वह भी निरंतर आनंद का सहज स्रोत बन जाता है। जितनी उम्र है उतने मिनट भी हर रोज आत्म ध्यान करेंगे तो निर्मल सुख मिलेगा। इसके परिणाम एक उदाहरण से समझें...

ट्रैफिक से फंसे हुए हैं, परेशान है तो एक कोने में खड़े हो जाएँ, जहाँ आप सुरक्षित हों। अब ध्यानपूर्वक आने-जाने वाले वाहनों को देखिए। सिर्फ देखना है। अंदर कोई निर्णय नहीं करना है कि कौन अच्छा चालक है, कौन बुरा है? कौन सी कार या स्कूटर किस कंपनी का है,? आपको ऐसे तटस्थ भाव से देखना है, जैसे आप किसी और ग्रह से आए हैं। ट्रेफिक जाम में हो रहे घमासान से कुछ लेना-देना नहीं है। शीघ्र ही आप पाएंगे कि आपके अंदर एक दृष्टा भाव जाग गया है। आप यातायात से बिल्कुल अलग हो गए हैं।

अब आत्म ध्यान अपने निवास पर या किसी पार्क में आँख मूंदकर करें। चुपचाप बैठ जाएँ और देखें, आपके मन की सड़क पर भी विचारों का कैसा ट्रेफिक जाम है...अच्छे विचार, बुरे विचार, सरपट भागे जा रहे हैं। लेकिन अब आप देखने की कला सीख गए हैं। आप इन सबसे अलग हैं। यह जो अलग है, वही आपका स्वभाव है।

हमारे स्वास्थ्य का आधार है आहार। जैसे बीज वैसा फल की तरह जैसा आहार वैसे विचार, वैसा जीवन। आहार का टेबल बेहद सहज है। 25 वर्ष की उम्र तक शरीर बनता है, ऊंचाई बढती है अत: एक्सरसाईज करें और खूब खाएँ। 25 से 45 वर्ष की उम्र में आजीविका कमाने के लिए श्रम करते है, गृहस्थी की जवाबदारी सम्भालते हैं अत: जितनी जरूरत है उतना ही आहार ले। न कम न ज्यादा। 45 की

उम्र के बाद इंद्रियाँ शिथिल होने लगती है। इसके बाद शरीर में रोगों की एंट्री होने लगती है अत: इस उम्र के बाद एक तिहाई भोजन ले, दो तिहाई पानी पीए और एक तिहाई भूख शुद्ध हवा से मिटाए। इसे जैन शास्त्रों में ऊनोदरी कहा गया है। अनोदारी करेंगे तो स्वस्थ रहेंगे।

आत्म ध्यान भोजन के एक घंटे बाद करना चाहिए। आत्म ध्यान के पूर्व सूक्ष्म व्यायाम जैसे प्राणायाम, कपाल भाती कर लेने से शरीर भी स्थिर रहने के लिए तैयार हो जाता है। ध्यान साधना में सोऽहं सहज प्राणायाम है।

आत्म ध्यान यानि आत्मा के लिए शरीर का उपयोग। अपनी सुप्त आत्मा जागृत करके आत्मा से जुड़ गए तो खुश रहेंगे और ख़ुशी बाँटेंगे। राग- द्वेष, लोभ- लालच और मोह- माया से मुक्त होकर अपनी मस्ती में जीने लगेंगे।

दुर्भाग्य से योग 'योगा' में बदलकर शारीरिक कसरत बनकर रह गया है। ध्यान की भी ऐसी दुर्दशा न हो इसलिए आचार्यश्री डॉ. शिव मुनिजी के आत्म ध्यान शिविर में गम्भीर साधकों को ही शामिल किया जाता है। एक दिवसीय शिविर गम्भीर आत्म ध्यान शिविर की एन्ट्रेस टेस्ट है। ध्यान कोई भी हो, सिद्ध होने में समय लगता है। यह छलांग नहीं क्रमिक विकास है। आत्म ध्यान की साधना से प्रत्येक व्यक्ति आगे बढ़ सकता है।

हताशा- निराश और तनाव- दबाव का नैसर्गिक उपचार हैं आत्म ध्यान

आत्म हत्या कोई चुनता नहीं। आत्मघाती विचार तब आते है जब दर्द हद से बढ़ जाता है और उससे लड़ने के साधन कम पड़ने लगते है। भावुक और संवेदनशील लोगों में यह प्रवृत्ति अधिक होती है।

श्री शिरीष मुनिजी कहते हैं- यह सच नहीं है कि आत्म हत्या करने के बारे में सोचने या ऐसा कर लेने वाले लोग डरपोक हैं। किसी व्यक्ति के मन में आत्महत्या करने का विचार आता है तो इसका मतलब यह नहीं है कि वह शक्स कायर, कमजोर, सनकी है या पलायन कर रहा है। या कि उसके भीतर कोई कमी है। इसका यह मतलब भी नहीं है कि वह वाकई मरना चाहता है। सच यह है कि उसकी पीड़ा, परेशानी

उसके भीतर की लड़ने की क्षमता से कहीं अधिक है। अपनी लड़ाई से वह थक गया है और अकेला महसूस कर रहा है। पीड़ा और परेशानी से लड़ने की सामर्थ्य में असंतुलन का परिणाम है- आत्मघात का विचार या आत्महत्या।

मनोवैज्ञानिक शोध बताते हैं कि मानसिक स्तर पर लोगों के त्रस्त होने की मुख्य वजह है तनाव और अवसाद। लम्बे समय तक तनाव से गुजरनेवाला शक्स अवसाद का शिकार हो जाता है। तनाव और अवसाद का मुख्य कारण है हर बात को नकारात्मक भाव से देखना। सकारात्मक सोच यह है कि दुनिया की कोई समस्या ऐसी नहीं है जिसका समाधान न हो। हम असफल इसलिए नहीं होते कि बुद्धि, योग्यता, अवसर या प्रतिभा की कमी है। सफलता तब ही मिलती है जब हम जीवन के प्रति उत्साहित हों। उत्साही व्यक्ति के लिए सफलता के दरवाजे सबसे पहले खुलते हैं।

आप आशावादी हैं, साहसी हैं तो आपको सफल होने से कोई नहीं रोक सकता। आत्म बल की कमी या कायरता उन्नति में बाधक है। यह स्वास्थ्य को भी प्रभावित करती है।

आत्मध्यान से सम्भावनापूर्ण चिन्तन बढ़ता है। यह बोध होने लगता है कि हर विपत्ति के भीतर एक अविकसित सम्भावना के बीज छुपे हैं। हर रात सोने से पहले और हर सुबह उठने के बाद आत्म ध्यान करें और खुद से कहें- मैं कर सकता हूँ। मैं करूंगा। इसके बाद दिन की शुरुआत इस विश्वास के साथ शुरू करें कि कुछ भी आपकी पहुँच से बाहर नहीं है। आप हर बाधा को पार कर सकते हैं। जब भी यह भरोसा कमजोर हो, आप कहीं भी हो, घर मे या दफ्तर में...पांच मिनट आत्म ध्यान करें।

डर भगाए, गुस्सा घटाए और आत्म बल बढ़ाए आत्म ध्यान

ख़ुशी, गुस्सा और दु:ख की तरह डर भी मनुष्य की मूल संवदेनाओं में से एक है। मनोवैज्ञानिकों में डर को लेकर मतभेद है। कुछ इसे बुरी परिस्थिति का परिणाम मानते हैं तो कुछ इसे जोखिमभरी स्थिति का पूर्वाभास, जो सावधान करता है। मनोविज्ञान कहता है कि डर का सामना करके ही इस पर विजय मिलती है।

स्वेट मार्डन ने कहा है कि भ्रम व्यर्थ का डर पैदा करता है। आपने खूब जमकर तैयारी की है पर परीक्षा हाल में जाते ही डर लगने लगता है। व्यापार शुरू करने के पहले हानि का डर लगने लगता है। गड़बड़ कुछ भी नहीं है। आप इस बारे में जितना सोचते है डर उतना ही बढ़ता जाता है।

डर को चिकित्सा विज्ञान में फोबिया भी कहते हैं। फोबिया कई तरह के होते हैं, जैसे- ऊंचाई का डर, सड़क पार करने का डर, पानी का डर, आग का डर, निर्णय लेने का डर, अंधेरे का डर, हथियारों का डर, बीमार होने का डर, भाषण देने का डर और सबसे ज्यादा मौत का डर। आप किसी मनोचिकित्सक के पास जाएंगे तो वह कहेगा डर से मुख मत मोड़ो। उन स्थितियों का सामना करो जिनसे डर लगता है। मनोचिकित्सक यह नहीं समझाता कि ऐसा कैसे करें।

इसका जवाब है ध्यान। आत्म ध्यान में आप डर की उत्पत्ति खोज सकते हैं। यह तय कर सकते हैं कि डर वास्तविक है या भ्रम। डर से अलग होने के लिए ध्यान अवस्था में सवाल पूछें- मैं डरता क्यों हूँ? क्या इसका कोई कारण है? इस कारण का तथ्यात्मक आधार है क्या?

आप आत्म ध्यान अवस्था में डर से बचने की क्रिया भी खोज सकते हैं। एक बार जब डर का कारण समझ लेंगे, उसे नियंत्रित करने का उपाय खोज लेंगे, तो अपने डर को सम्भालना सीख जाएँगे। आत्म ध्यान डर को रचनात्मक ऊर्जा बना देता है। जैन धर्म के आख्यानों में भगवान महावीर ने अहिंसा से ज्यादा निर्भयता पर जोर दिया है।

गुस्से का उपचार भी है आत्म ध्यान

गुस्सा भी डर की तरह साधारण मानवीय भावना है जिसकी तीव्रता में परिवर्तन होता है। गुस्से में व्यक्ति का ब्लड प्रेशर बढ़ जाता है। एनर्जी हारमोंस भी बदलते हैं। गुस्से के कारण आंतरिक और बाहरी दोनों होते हैं। हमारी इच्छा या जरूरतें और आशा पूरी नहीं होती तो गुस्सा आता है। कभी कभी छोटी छोटी बातें जैसे ट्रेफिक जाम, फ्लाईट लेट होना, टीवी का रिमोट काम नहीं करना या किसी दोस्त

के आने में देरी होने से भी गुस्सा आ जाता है। जिन्हें हमेशा गुस्सा आता है उनमे नकारात्मक भाव जन्म लेने लगते हैं। वे जल्दी विवादों में फंस जाते हैं। गुस्सा स्वास्थ्य पर भी बुरा असर डालता है। ब्लड प्रेशर और कोलेस्ट्राल बढ़ा देता है। दिल के रोग हो जाते हैं। रोग प्रतिरोधक क्षमता घट जाती है। सामाजिक रिश्ते बिगड़ने लगते हैं।

आत्म ध्यान का साधक जो करता है होशपूर्वक करता है। उसे गुस्सा भी आता है तो फौरन सचेत हो जाता है। जब भी डर या गुस्सा आए तो आत्मध्यान करें और खुद से कहें कि मैं आत्मा हूँ। मुझमें परमात्मा है। मैं किसी से या किसी बात से नहीं डरता। मेरा मन शांत है। मेरा मस्तिष्क शांत है। मन और मस्तिष्क जितने शांत और एकाग्र होंगे अशांति और डर का असर उतना ही कम होगा।

ब्रेन क्लीनर है आत्म ध्यान

आत्म-ध्यान स्व की यात्रा है। जल के कण-कण में जैसे शीतलता समाई है, वैसे ही हम सबकी आत्मा में आनंद समाया हुआ है। विडम्बना यह है कि कस्तूरी मृग की तरह हमें इसका बोध नहीं है और हम सुख की खोज में बाहर भटकते रहते हैं।

आत्म ध्यान से आत्मबोध हो जाता है। जीवन में कितनी भी समस्याएं हों, आत्म ध्यान साधक को आनंदपूर्वक जीने की कला सीखा देता है। जीवन है तो समस्याएँ आएंगी ही, व्यवधान आएंगे ही, पर आत्मबोध हो जाएगा तो कोई भी समस्या विचलित नहीं करेगी। दुःख या क्लेश नहीं होगा। आत्म ध्यान का साधक दुःख से परे हो जाता है। तनावमुक्त हो जाता है।

आत्म ध्यान से आपकी याददाश्त तीव्र हो जाएगी। आत्म ध्यान से अंतर ज्ञान (Intuition Power) बढ़ जाएगा। आप नैतिक- अनैतिक कृत्य का फर्क समझेंगे और वही करेंगे, वही कहेंगे जो आपके, आपके परिवार, आपके समाज और आपके देश में हितकारी होगा।

अध्याय - 5

क्या होगा आत्म ध्यान से?

आत्म ध्यान से मन के समस्त भ्रम दूर हो जाते हैं। विषय भोगों से आसक्ति और मोह- माया (यह मेरा है, यह तेरा है) का अभाव हो जाने पर मन एकाग्र हो जाता है।

आत्म ध्यान से साधक की बुद्धि तीक्ष्ण हो जाती है। आत्मा की अनुभूति से अवगुण नष्ट हो जाते हैं और सद्गुण उत्पन्न हो जाते हैं।

आत्म ध्यान से यह बोध हो जाता है कि संसार के सारे पदार्थ अनित्य हैं। आत्म ध्यान व्यक्ति को ऐसे काम करने से रोकता है, जिससे उसे नीचा देखना पड़े।

चेतना स्थिर होने लगती है। एकाग्रचित्तता बढ़ती है। इतनी निडरता आ जाती है कि मृत्यु से भी डर नहीं लगता।

आत्म ध्यान विराट ब्रह्मांड के प्रति सजग करता है। अन्यथा लोगों को मरते दम तक भी यह ध्यान नहीं रहता कि वे जिंदा भी थे।

आत्म ध्यान आसपास की ऊर्जा बढ़ाता है। साधक को अपने अस्तित्व का बोध हो जाता हैं। ध्यान से व्यक्ति को समस्या को समझने और निराकरण करने की शक्ति मिलती है।

आत्म ध्यान शरीर, मन और आत्मा के बीच लयात्मक संबंध बनाता है। देखने और सोचने का दृष्टिकोण बदल जाता है। अन्यथा ज्यादातर लोग पशु स्तर पर ही सोचते, समझते और व्यवहार करते हैं।

बुद्धिमान से बुद्धिमान व्यक्ति भी क्रोध, लालच, झूठ और कामुकता से नहीं बच पाते हैं। ध्यानी व्यक्ति यम और नियम को साध लेता है।

आत्म ध्यान से ऊर्जा केन्द्रित होती है। ऊर्जा केन्द्रित होने से मन और शरीर में शक्ति का संचार होता है एवं आत्मिक बल बढ़ता है। ध्यान से वर्तमान को देखने और समझने में मदद मिलती है लक्ष्य को प्राप्त करने की प्रेरणा और क्षमता प्राप्त होती है।

मन विचारों का कारखाना है। मन में सतत कल्पना और विचार चलते रहते हैं। इससे मानसिक अशांति पैदा होती है। आत्म ध्यान अनावश्यक कल्पना व विचारों से मन को मुक्त कर देता है। निर्मल मौन हो जाता है। ध्यान में गहराई आती है तो व्यक्ति पर किसी भी भाव, कल्पना और विचारों का प्रभाव नहीं पड़ता। ज्ञाता-दृष्टा भाव स्थिर होने लगता है।

आत्म ध्यान से आत्मिक शक्ति बढ़ती है। मानसिक शांति की अनुभूति होती है। ध्यान से विजन पॉवर बढ़ता है तथा निर्णय लेने की क्षमता बढ़ जाती है।

सभी तरह के रोग और शोक मिट जाते हैं। ध्यान साधक का तन-मन और मस्तिष्क शांति और प्रसन्नता का अनुभव करते हैं।

तृप्ति आत्मा में उतरने से मिलती है। आत्म ध्यान से यह बोध हो जाता है कि जीवन में खाने और सोने के अलावा कुछ और भी है। ध्यान में इंद्रियां मन के साथ, मन बुद्धि के साथ और बुद्धि आत्मा में लीन होने लगती है।

आत्म ध्यान से चिंता और चिंतन से उपजे रोगों का खात्मा होता है। भीतर शांति होगी तो स्वस्थ अनुभव करेंगे। कार्य और व्यवहार में सुधार होने लगेगा। रिश्तों में तनाव नहीं रहेगा। दृष्टिकोण सकारात्मक होगा। सफलता खुद आपके नजदीक आने लगेगी।

आत्म ध्यान से विवेक जागृत होता है। विवेक के जागृत होने से होश बढ़ता है। आत्म ध्यान का लक्ष्य ही है- जन्म जन्मान्तर की तंद्रा को तोड़ना।

आपाधापी, शोर और प्रदूषण के दौर में व्यक्ति तनाव और मानसिक थकान अनुभव करता है। ध्यान से व्यक्ति विश्राम में रहकर थकानमुक्त अनुभव करता है। गहरी से गहरी नींद से भी अधिक लाभदायक है आत्म ध्यान। चिंताएं समाप्त हो जाती हैं। समस्याएं छोटी हो जाती हैं।

आत्म ध्यान से सामंजस्यता बढ़ती है। जब भी आप भावनात्मक रूप से अस्थिर और परेशान होते हैं, तो ध्यान स्वच्छ, निर्मल, शांत और समता भाव में बनाए रखता है।

ध्यान से शरीर की प्रत्येक कोशिका के भीतर प्राण शक्ति का संचार होता है। शरीर में प्राण शक्ति बढऩे से आप स्वस्थ अनुभव करते हैं। ध्यान से उच्च रक्तचाप नियंत्रित होता है। सिरदर्द दूर होता है। शरीर की प्रतिरोधक क्षमता का विकास होता है। शरीर सुडौल और तेजोमय होता है।

आत्म ध्यान का साधक शांत हो जाता है। यह शांति मन और शरीर को मजबूती प्रदान करती है। ध्यान भावना और विचारों को शुद्ध करके वर्तमान में जीना सीखा देता है। निरंतर साक्षी भाव में रहने से सुप्त शक्तियां और सिद्धियां जाग जाती हैं। आत्म ध्यान के साधक मन और मस्तिष्क के बहकावे में नहीं आते हैं।

आत्मविश्वास जागृत हो जाने से आत्म ध्यान का साधक असाधारण कार्य आसानी से कर लेता है। वह भूत और भविष्य की कल्पनाओं के बजाय वर्तमान में जीता और रमता है।

आत्म ध्यान से आत्म ज्ञान हो जाता है। ध्यान लगाते रहने से भविष्य में घटित होने वाली घटनाओं का पूर्वाभास तक होने लगता हैं।

आत्म ध्यान हमारे स्मृति कोष को खाली कर देता है। चित्त से सारे आब्जेक्ट्स हट जाते हैं और चेतना शेष रह जाती है। चेतना की यह अवस्था ध्यान की सबसे बड़ी उपलब्धि है।

ध्यान ऐसी अग्नि है जिसमें बुराइयां भस्म हो जाती हैं। अग्नि में तपने से सोना कुंदन बन जाता है। उसी प्रकार ध्यान की अग्नि से जीवन कुंदन बनता है। आप ध्यान करने लगेंगे तो ज्यादा बात करने और जोर से बोलने का मन ही नहीं करेगा।

आत्म ध्यान आपके मन को परमात्मा से जोड़ता है। ध्यान लगाने से आपको लगेगा कि कोई आपके भीतर बैठा है और समस्याओं का समाधान देने लगा है। आत्म ध्यान से अनुभूति होगी कि परमात्मा आपके भीतर है।

ध्यान से जीवन में दिव्यता आती है। दिव्यता आती है तो सृष्टि सुंदर लगने लगती है। ऐसा व्यक्ति जीवन की समस्त बुराइयों से ऊपर उठ जाता है।

अशांत चित्त हमारे लिए बड़ी परेशानियाँ खड़ी करता है। हमें दुख पहुँचाता है। हमारी साध्य चेष्टाओं में बाधक बनता है। अशांत चित्त स्वास्थ्य पर भी दुष्प्रभाव डालता है तो पारिवारिक और व्यावसायिक जीवन में समस्याएँ पैदा करता है। ध्यान साधना से ऐसी समस्या का समाधान मिलता है।

अनिद्रा और थकान का उपचार है ध्यान। ध्यान के जरिए साँस संबंधी संक्रमणों की सम्भावना घट जाती है।

चित्त अधिक स्थिर, शांत, निर्मल और उदार हो तो हम उसका उपयोग रचनात्मक ढंग से कर सकते हैं। आत्म ध्यान का साधक आत्मविश्लेषण करने लगता है। विषय को समझने से विचारों में स्पष्टता आ जाती है।

ध्यान साधना ऐसी सकारात्मक मनोवृत्ति बना देती है जो हमारे साथ दूसरों के लिए भी हितकारी हो। ध्यान लगाने से मूड में सुधार होता है और उत्साह और उमंग का संचार होता है।

हमारी पांच प्रत्यक्ष इंद्रियां हैं- आंख, कान, नाक, जीभ और स्पर्श। छठी अप्रत्यक्ष इन्द्रिय है मन। यही यह पांचों इंद्रियों का मिलन स्थल है। यही सबसे बड़ी दिक्कत है। इस मिलन स्थल को मंदिर बनाने के लिए ध्यान मन को नियंत्रित करता है/रखता है। इन्द्रियों और अपने मन के पार अपने अस्तित्व से मिलाता है- आत्म ध्यान।

ध्यान से व्यक्ति को बेहतर समझने और देखने की शक्ति मिलती है। साक्षी भाव में आप आत्मिक रूप से स्ट्रांग बन सकते हो।

आप मंदिर, मस्जिद, चर्च या गुरुद्वारे में वह नहीं पा सकते जो आत्म ध्यान आपको दे सकता है। महान लोगों को जो भी मिला है वह ध्यान से ही मिला है।

हमारे मन में एक साथ असंख्य कल्पना और विचार चलते रहते हैं। मन-मस्तिष्क में कोलाहल-सा उत्पन्न होने लगता है जिससे मानसिक अशांति पैदा होती है। आत्म ध्यान अनावश्यक कल्पना व विचारों को मन से निकालकर शुद्ध और निर्मल मौन में प्रवेश को आसान बनाता है।

आत्म ध्यान से -हर तरह का भय जाता है, निडरता आती है। चिंता और चिंतन से उपजे रोगों का खात्मा होता है। भीतर में शांति होगी तो स्वस्थ अनुभव करेंगे। कार्य और व्यवहार में सुधार होगा। रिश्तों में तनाव की जगह प्रेम होगा। दृष्टिकोण सकारात्मक होगा। सफलता के बारे में सोचने मात्र से ही सफलता आपके नजदीक आने लगेगी।

खुद तक पहुंचने और खुद को पहचानने का मार्ग है आत्म ध्यान। स्वयं को पाने का अर्थ है हमारे होश पर भावना और विचारों की सारी परतें हट जाना। मन निर्मल तथा शुद्ध हो जाना। ज्ञानीजन कहते हैं कि उपलब्धियों की लिस्ट में सबसे ऊपर स्वयं को रखें। स्वयं को जानने से मत चूको। उम्र सेकंड की तरह बीत जाती हैं।

आत्म ध्यान में ज्यादा समय की जरूरत नहीं है। मात्र पांच मिनट का ध्यान आपको भरपूर लाभ दे सकता है बशर्ते कि आप ध्यान में रहने का स्वभाव बना लें। इसके बाद अपनी रूचि अनुसार समय बढाते जाएँ। यदि ध्यान आपके स्वभाव और दिनचर्या का हिस्सा बन गया तो आपको हर पल आनंद की प्राप्ति होने लगेगी। आत्म ध्यान से परमात्मा से मिलन की वैसी ही अनुभूति होती है, जैसे बूंद सागर से मिलती है।

(विगत 25 वर्षों से हर मुद्रा- बैठकर, खड़े होकर और लेटकर, सतत घंटो आत्म ध्यान कर रहे श्री शिरीष मुनिजी कहते हैं कि आत्म ध्यान की शुरुआत अभ्यास मांगती है। एक बार यह तकनीक आत्मसात हो जाए तो फिर ध्यानस्थ होने के लिए किसी स्थान, माहौल और सुविधा की जरूरत नहीं पड़ती। यहाँ तक की शोर गुल भी बाधा नहीं बनता। साधक सोचते ही ध्यानस्थ हो जाता है। हर ध्यान के बाद चुस्त-दुरुस्त हो जाता है। सरल शब्दों में कहें तो हमारे शारीरिक और मानसिक तन्त्र की सर्विसिंग और चार्जिंग हैं आत्म ध्यान।)

एक छोटे से गाँव में एक वृद्ध दम्पती छोटी सी कुटिया में रहते थे। एक रात बहुत बरसात हुए और आसपास अंधकार छा गया। वुद्ध पति- पत्नी कुटिया का दरवाजा बंद करके सो रहे थे। किसी ने द्वार खटखटाया। बूढ़े व्यक्ति ने दरवाजा खोलकर कहा- आइए मित्र अतिथि, आपका स्वागत है। हमारे पास केवल एक ही बिस्तर है लेकिन हम तीनों इस पर विश्राम कर सकते हैं। अजनबी आभार मानते हुए उनके साथ लेट गया। थोड़ी देर में एक और अजनबी ने दरवाजा खटखटया। बुढा व्यक्ति दरवाजा खोलने उठा तो पहले वाले अजनबी ने कहा- अब यहाँ जगह कहाँ है। बूढ़े ने कहा कि हमने तुम्हारे लिए जगह बनाई तो एक और व्यक्ति के लिए जगह बन सकती है। हम लेटेंगे नहीं, बैठे बैठे रात कट जाएगी। बातचीत करेंगे। चुटकुले सुनेंगे सुनाएंगे।

अजनबी को प्रवेश मिल गया। थोड़ी देर में द्वार पर फिर आवाज हुई। बूढ़े व्यक्ति ने दरवाजा खोला तो देखा कि भयंकर बरसात हो रही है और एक गधा दरवाजे के समाने खड़ा है। बुढा व्यक्ति उस गधे को भी अंदर लेने लगा तो दोनों अजनबी झल्लाकर बोले- अब यहाँ जगह कहाँ है? और फिर यह तो गधा है। यह यहाँ हमारे साथ रहेगा? बुढा बोला- यह कोई अमीर का घर नहीं है। यह गरीब का झोपड़ा है। यहाँ जगह की कमी नहीं है। अब हम सब ना लेटेंगे, न बैठेंगे, खड़े- खड़े रात गुजार देंगे। गधा भी एक जीव है और बाहर भारी बरसात हो रही है। दोनों अजनबी खिन्न और परेशान होते रहे पर वृद्ध दम्पत्ति हंसते रहे और वह रात कट गई।

जीवन के प्रति हमारा दृष्टिकोण क्या है? क्या हम मानते हैं कि सबकी देह में आत्मा है। आत्मा के स्तर पर हम सब समान है।

एक घने जंगल में एक इच्छापूर्ति वृक्ष था। उस वृक्ष के नीचे बैठ कर कोई भी इच्छा करो तो वह तुरंत पूरी हो जाती थी। यह बात बहुत कम लोग जानते थे क्योंकि उस घने जंगल में जाने की कोई हिम्मत नहीं करता था।

एक बार संयोग से एक थका हुआ व्यापारी उस वृक्ष के नीचे आराम करने के लिए बैठ गया। उसे पता नहीं चला और उसकी नींद लग गई।

जागने पर उसे बहुत भूख लगी। उसने आस पास देखकर सोचा- काश कुछ खाने को मिल जाए। तत्काल स्वादिष्ट पकवानों से भरी थाली हवा में तैरती हुई उसके सामने आ गई।

व्यापारी ने भरपेट खाना खाया और सोचने लगा.

काश कुछ पीने को मिल जाए..

तत्काल उसके सामने हवा में तैरते हुए अनेक शरबत आ गए।

शरबत पीने के बाद वह आराम से बैठ कर सोचने लगा- कहीं मैं सपना तो नहीं देख रहा हूँ। हवा में से खाना पानी प्रकट होते पहले कभी नहीं देखा, न ही सुना। जरूर इस पेड़ पर कोई भूत रहता है जो मुझे खिला पिला कर बाद में मुझे खा लेगा। ऐसा सोचते ही तत्काल उसके सामने एक भूत आया और उसे खा गया।

हमारा मस्तिष्क भी इच्छापूर्ति वृक्ष है. आप जिस चीज की प्रबल कामना करते हैं वह आपको मिलती है.।अधिकांश लोगों को जीवन में बुरी चीजें इसलिए मिलती हैं क्योंकि वे बुरी चीजों की ही कामना करते हैं।

आचार्यश्री डॉ. शिव मुनिजी के साथ ज्येष्ठ शिष्य श्री शिरीष मुनिजी और श्री शुभम मुनिजी

ध्यान परिचय

प्रमुख मंत्री श्री शिरीष मुनि जी म.सा.

अरिहन्त प्रभु की अनन्त कृपा से आचार्य भगवन् को आत्म ध्यान साधना (वीतराग साधना) प्राप्त हुई है। प्रतिदिन आप पारस चैनल के माध्यम से आचार्य भगवन् के प्रवचनों को सुन रहे हैं जिसके अन्तर्गत ध्यान साधना के प्रयोग की भी चर्चा होती है।

आत्म ध्यान एक आईना है जिसमें हम अपने जीवन का अवलोकन करते हैं। हमारे दोषों का अवलोकन करते है। हमारे अन्तरंग सुख का बोध पाते हैं। अनित्य संसार में हम जहां सुख खोज रहे हैं उससे बाहर निकलकर हम अपने स्व में आते हैं।

आत्म ध्यान साधना से आपको लगेगा कि मैं भी वही आत्मा हूं जो सिद्ध भगवान में हैं, जो अरिहन्त में हैं, जो आचार्य में है, जो उपाध्याय में है, जो साधु में है। आप कहेंगे ऐसा कैसे होगा। हम वर्षों से, सामायिक कर रहे है, प्रवचन सुन रहे है, परिवर्तन नहीं आया तो ये दो घण्टे में परिवर्तन कैसे आ जाएगा?

आपने पढ़ा है कि बल्ब की खोज करने के लिए एडिसन को वर्षों लग गए थे। 700 बार वह फेल हुआ लेकिन बल्ब बन गया तो स्विच ऑन करते ही रोशनी होने लगी। ऐसे ही आचार्य भगवन् ने संयम के 45- 46वर्ष साधना करके आत्म ध्यान खोजा है। आपको अपने अन्दर प्रवेश करवाने का केप्सुल तैयार किया है। अब जैसे बल्ब ऑन करने से रोशनी होती हैं वैसे ही आत्म ध्यान साधना से आपको शांति और आनंद मिलता है। तो आईए, अपनी आत्मा और आत्मा में छिपे परमात्मा का साक्षात्कार करें...

(1) आत्म स्वरूप ध्यान

(24 मिनट)

(1)

1. आँखें बंद शरीर को एक सुखद आसन दे दे।
2. अनुभव करें सर के सिरे से पाँव के अंगूठे तक आपका सारा शरीर शांत व शिथिल हो रहा है।
3. बाहर के संसार से आपके घर परिवार से, संघ से, समाज से, चार गति से वर्तमान समय में आपका कोई सम्बन्ध नहीं है।

(2)

1. अनादि से यात्रा करते हुए वर्तमान में उदय कर्म के अधीन इस देह में आये।
2. आयुष्य कर्म पूर्ण होगा इस देह से विदाई होगी।

(3)

1. आप आत्मा हैं। एक स्वतन्त्र अस्तित्व है आपका।
2. आत्मा निराकार है, निर्विकार है, अकेला है।
3. किसी का मित्र या शत्रु नहीं।
4. रागी या द्वेषी नहीं।
5. माता-पिता, बहन-भाई, गुरू-शिष्य आदि इसका किसी से कोई सम्बन्ध नहीं।

(4)

1. एक स्वतन्त्र अस्तित्व हैं।
2. अपने सत्य को जानो।

3. इस साढे तीन हाथ की काया में सर के सिरे से पांव के अंगूठे तक अपने होने को महसूस करो।
4. जिसके होने से श्वांस चल रही है।
5. हृदय धड़कता है।
6. बुद्धि निर्णय लेती है।
7. शरीर के अंगोपांग अपना कार्य करते हैं।
8. आप वो चेतना हैं, वो सत्य हैं।
9. आज अपने सत्य में आइये।
10. सारी मिथ्या पहचान छोड़ दीजिए।

(5)

1. मैं मनुष्य, मैं स्त्री, मैं पुरूष, मैं विद्वान, मैं धनवान, मैं श्रावक सारी मिथ्या पहचान को छोड़कर।

1. एक सत्य मैं आत्मा हूँ। इस सत्य को स्वीकारिये।
2. मेरा जन्म नहीं, मेरी मृत्यु नहीं।
3. आत्मा को किसी से भय नहीं, किसी से शिकायत नहीं।

(6)

1. मैं वो शुद्ध तत्व हूँ, मैं आत्मा हूँ ।
2. कभी नरक में नारकी का देह धारण किया।
3. कभी पशु का देह धारण किया।
4. कभी देव देह मिला।
5. कभी मनुष्य का देह मिला, कोई देह मेरा सगा नहीं।

6. वर्तमान में मौजूद देह भी मेरा अपना नहीं।

7. इस पर मेरा अधिकार नहीं।

(7)

1. मैं आत्मा हूँ। पूरी तरह अपने इस सत्य को स्वीकार कर लीजिए।

2. मेरा नाम नहीं, लिंग नहीं, कोई गौत्र नहीं। मैं आत्मा हूँ।

3. मुझे शस्त्र काट नहीं सकता, अग्नि जला नहीं सकती, वायु उड़ा नहीं सकती, मृत्यु मिटा नहीं सकती। मैं शाश्वत हूँ।

(8)

1. स्वरूप को जाने बिना मैं चार गति में यात्रा करता रहा।

2. कभी स्वयं को कर्ता मान कर, कभी स्वयं को भोक्ता मान कर आर्त-रौद्र ध्यान करता रहा।

(9)

1. मैं आत्मा ज्ञाता-दृष्टा हूँ ।

2. अपने स्वरूप का चिन्तन कीजिए।

3. अपने सत्य को स्वीकार कीजिए।

4. मुझे बाहर कहीं किसी से कुछ नहीं पाना।

(10)

1. सब मेरे भीतर हैं।

2. परम तत्व मुझमें विद्यमान है।

3. केवलज्ञान मुझमें समाया है।

4. केवलदर्शन मुझमें है।
5. अनन्त सुख, अनन्त शक्ति सम्पन्न, मैं आत्मा हूँ।
6. अपने इस सम्पन्नता, अपने इस साम्राज्य को महसूस कीजिए।
7. आप आत्मा सिद्ध समान है।

(11)

1. अपने अलावा अन्य किसी को महत्व नहीं देना।
2. यह समय आपका आपके लिए है।
3. आप आत्मा है। आत्मा है। आत्मा है। आत्मा है। आत्मा है।
4. अरिहंत समान है।
5. सिद्ध समान है।
6. आचार्य समान है।
7. उपाध्याय जैसा शुद्ध आत्मा है।
8. जो समस्त साधु-साध्वी में है वहीं शुद्ध चेतना है आप
9. अपने में उतरते चले जाइये।
10. अपने में गहरे प्रवेश कीजिए

(12)

1. अपने में आपको विश्राम मिलेगा
2. असत्य को छोड़ सत्य की शरण में आने से।
3. विचारों के दृष्टा बन जाने से भीतर मौजूद अनन्त सुख प्रकटने लगेगा।
4. आपके अनुभव में आने लगेगा।

(13)

1. होकर के कोई विचार विचारना नहीं।
2. विचार आने लगे तो सहज श्वांस के साथ सोऽहं ध्वनि जोड़ सकते है अन्यथा विचारों के दृष्टा बन जाइए।
3. अन्तिम अवस्था शांत व शून्य की है।

(14)

4. आप में अनन्त सुख है। अपने में गहरे-गहरे।
5. सुख सम्बन्धों में नहीं परिग्रह में नहीं।
6. दैहिक सौन्दर्य में नहीं, पद-प्रतिष्ठा में नहीं।
7. सुख आपके भीतर है।

(15)

1. ध्यान:- अपने में उतरना ध्यान है।
2. अपने में विश्राम करना ध्यान है।
3. जहाँ संकल्प-विकल्प नहीं।
4. जहाँ कोई शिकायत, इच्छा नहीं।
5. जहाँ कुछ पाना या खोना शेष नहीं।
6. जहाँ चित्त शांत है।
7. आप समाधि में हैं।
8. जहाँ भीतर का सुख झलकता है।
9. जहाँ देह व देह की पीड़ा गौण होने लगती है।

10. जहाँ इन्द्रियां, इन्द्रियों के विषय भोग गौण होने लगे।
11. और भीतर का अनन्त सुख छलकने लगे। वह ध्यान की अवस्था है।

(16)

1. जहाँ कर्म के उदय का कोई भय नहीं।
2. जहाँ कर्म को दबाने की कोई प्रार्थना नहीं। वह ध्यान की शुद्ध अवस्था है।
3. अपने सत्य को स्वीकारते जाओ।
4. अपने सत्य में स्थित हो जाओ।

(17)

1. जैसे महावीर स्व: में स्थित थे।
2. वो अपने में स्थित रहे।
3. कर्म उदय में आये।
4. अपने आप क्षय हो गये।
5. वो समाधि में थे।

(18)

आज महावीर की स्तुति नहीं, महावीर जैसी अवस्था को प्राप्त करना है।

(19)

1. आप आत्मा है। अपने इस सत्य को आत्मसात् कीजिये।
2. बंद आंखों से, खुली आंखों से मात्र एक सत्य हो।

(20)

1. इसी सत्य को आत्मसात् करते हुए।
2. एक सामान्य श्वांस भीतर लें, धीरे-धीरे छोड़ दें।
3. जब भी आपको लगे दोनों हाथ आंखों पर कोमल सा स्पर्श। जब चाहे अपनी आँखें खोल सकते हैं।

(2) सोऽहं ध्यान

(27 मिनट 46 सैकण्ड)

(1)

1. आँखें बंद, शरीर को एक सुखद आसन दें दे। एक हाथ पर दूसरा हाथ टिका हुआ। हथेली गोद में आकाश की ओर खुली हुई।
2. अनुभव करें, सर के सिरे से पांव के अंगुठे तक सारा शरीर आपका शांत, शांत व शिथिल हो गया है।
3. इस साधना कक्ष से बाहर इस पूरे संसार में आपके घर परिवार में पूरे ब्रह्माण्ड में कहां क्या घट रहा है उससे आपका इस वर्तमान समय में कोई वास्ता नहीं हैं।
4. यह सारा संसार व्यवस्थित शक्ति के अन्तर्गत चल रहा है।

(2)

3. यहां कुछ सही गलत नहीं है। अच्छा-बुरा नहीं है। जैसे एक केवली तीन लोक को देखता है। पर उसके साथ जुड़ता नहीं, उस पर प्रतिक्रिया नहीं करता। वैसे केवली की भांति जो जहाँ जैसा घट रहा है। उसे घटने दीजिये, होने दीजिये

4. इस साधना कक्ष के भीतर कौन साधक कहाँ बैठा है, क्या कर रहा है। आज उससे भी वर्तमान समय में कोई वास्ता नहीं।
5. यह एक शोध कार्य है। अपने अस्तित्व को जानना यह सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न है, सबसे महत्वपूर्ण ज्ञान है।

(3)

1. आप आत्मा हैं। आत्मा और शरीर दोनों श्वांस की डोर से जुड़े हैं।
2. एक श्वांस के टूटते ही देह और आत्मा दोनों तत्व जुदा होंगे।
3. अपना ध्यान अपने आने-जाने वाले श्वांस-प्रश्वांस पर ले आइये।
4. एक श्वांस भीतर प्रवेश करता है। एक श्वांस विदा हो रहा है।

(4)

1. प्रत्येक आने वाला श्वांस आपको नया जीवन दे रहा है।
2. श्वांस एक सेतू है देह और आत्मा के मध्य
3. सत्य और असत्य के मध्य
4. जीव और अजीव के मध्य

(5)

1. यह श्वांस आपको वर्तमान क्षण से जोड़ता है।
2. भूतकाल का कोई विचार आपको होकर विचारना नहीं।
3. भविष्य के विषय में आपको कुछ चिन्तन, मनन करना नहीं।
4. अपने वर्तमान से जुड़ी श्वांस, प्रांश्वस को देखिए। 6मिनट 59 सैकण्ड से
5. धीरे-धीरे आपका चित्त शांत होगा। 7 मिनट 45 सैकण्ड से

(6)

1. ध्यान के अन्तर्गत कोई विचार अत्छा या बुरा नहीं।
2. वर्तमान समय में न महावीर स्वामी का चिन्तन करेंगे। न किसी अन्य इष्ट आराध्य का चिन्तन करेंगे।
3. कोई मन्त्र नहीं, कोई स्तोत्र नहीं।
4. मात्र अपने वर्तमान से जुड़े रहिये।
5. अपने श्वांस-प्रश्वांस से जुड़े रहिये। 9 मिनट 13 सैकण्ड से

(7)

1. कोई संकल्प-विकल्प नहीं।
2. कोई इच्छा, आवश्यकता नहीं।
3. मात्र श्वांस पर आपका ध्यान टिका रहें। 10 मिनट से
4. विचारों की श्रंखला बढने लगे। पुन: श्वांस पर आ जाएँ।
5. चित्त शांत हो तो श्वांस को भी छोड़ दे। 12 मिनट 23 सैकण्ड से

(8)

1. आप आत्मा है। वही आत्मा जो अरिहंतो में हैं। सिद्धों में है। जो प्रत्येक मनुष्य में है।
2. वही आत्त्मा जो नारकी में हैं। तिर्यंच में हैं। देव में हैं।
3. भारत, महाविदेह, ऐरावत, पन्द्रह कर्म भूमि में विचरने वाले में जो सत्य हैं, वहीं सत्य आप है।

(9)

4. देह सबका भिन्न-भिन्न हैं परन्तु मूलतत्व सबका एक समान हैं।
5. अपनी आती-जाती श्वांस को सोऽहं की ध्वनि से जोड़िये।
6. सो' का अभिप्राय जो आत्मा आपके इष्ट, गुरू आराध्य आपकी श्रद्धा में हैं।
7. 'हं' का अभिप्राय वही आत्मा में हूँ।
8. यह श्वांस-प्रश्वांस की प्रक्रिया नहीं हैं।
9. आत्म-परमात्म मिलन की ध्वनि हैं।

(10)

1. एक सोऽहं को साध लिया मानो मुक्ति के पथ पर बहुत आगे-आगे-आगे बढ़ गये।
2. सारे भेद-भाव मिट गये। समस्त शिकायतों का अंत हो गया।
3. देह की आसक्ति टूट जाएगी। मोह कर्म टूट जाएगा।
4. अपने सत्य को जानो। अपने आराध्य के सत्य को जानो।
5. मूल तत्व को जानो।

(11)

1. यहां से सोऽहं की चोट होगी।
2. हमारी आवाज के साथ आपकी श्वांस चलेगी। आप मुख से कोई आवाज नहीं करेंगे।
3. 'सो' की ध्वनि पर आपका ध्यान आपके आराध्य पर जाये उनके देह पर नहीं, उनके मूल आत्मतत्व पर जाये।
4. 'हं' की ध्वनि पर आपका ध्यान आपके स्वयं के सत्य पर आपके निज आत्मा, निज चेतना पर आये। (धीमे) सोऽहं, सोऽहं, सोऽहं, सोऽहं.....

(12)

1. 'सोऽहं', सोऽहं अब सो की ध्वनि पर आपका ध्यान स्वर्ग के देवों के शुद्ध तत्व पर जाये।
2. 'हं' की ध्वनि पर आपका ध्यान आपके स्वयं के तत्व पर आये। सोऽहं, सोऽहं, सोऽहं।
3. 'सोऽहं', 'सोऽहं', 'सोऽहं' सो अर्थात समस्त मनुष्यों में विद्यमान शुद्ध मूल तत्व। 'हं' अर्थात आप आत्मा सोऽहं, सोऽहं, सोऽहं, सोऽहं.....
4. सो अर्थात तिर्यंच के सभी जीव। 'हं' अर्थात आप आत्मा सोऽहं, सोऽहं, सोहं, सोऽहं...
5. सो अर्थात नरक के नारकी, हं अर्थात आप आत्मा
6. सोऽहं, सोऽहं, सोऽहं, सोऽहं सोऽहं, सोऽहं...

(13)

1. आप, हम, हम सब एक समान है।
2. आप और हम सबमें केवलज्ञान समाया है।
3. सबमें केवल दर्शन समाया है।
4. सबमें मुक्त होने का सामथ्र्य है।
5. हम सब आत्मा मुक्त होंगी।
6. इसी सत्य को स्वीकार करते हुए शांत शून्य अवस्था को प्राप्त कीजिये। 22 मिनट 33 सैकण्ड से।

(14)

1. विचारों से उलझना नहीं।
2. विचारों से कहानी नहीं बनानी।

3. विचारों की श्रंखला बनने लगे तो मन ही मन सहज श्वांस के साथ सोऽहं ध्वनि को जोड़ा जा सकता है। 25 मिनट 3 सैकण्ड से

(15)

4. आप आत्मा है।
5. जो आप है वो हर देह में है।
6. जिससे कभी राग किया उसमें भी वही मूलतत्व हैं।
7. जिससे कभी द्वेष किया उसमें भी वही मूलतत्व हैं।
8. जिसे धिक्कारा उसमें भी वही तत्व है।
9. जिसे स्वीकारा उसमें भी वही तत्व है।
10. जिस पर श्रद्धा की वह भी वही है।
11. जिसकी निंदा की वह भी वही है।
12. आप, हम, हम सब एक समान हैं।

(16)

1. मुक्त होने के लिए अपने को जानना अनिवार्य है।
2. आज आप मात्र अपने स्वयं को समय देंगें।
3. दैहिक क्रियायें चलेंगी।
4. आँखें दृश्य देखेंगी।
5. कान श्रवण करेंगे।
6. नासिका अपना कार्य करेगी।
7. जिह्वा अपना कार्य करेंगी।
8. स्पर्शन्द्रिय अपना कार्य करेंगी।

9. मन अपना कार्य करेगा।

10. बुद्धि अपना कार्य करेगी। आप मात्र उसे जानेंगे और देखेंगे।

(17)

1. प्रत्येक श्वांस के साथ अपना शोध कार्य करना हैं।

2. अपने करीब आना है।

3. अपने को जानना हैं।

4. आपकी मुक्ति की यात्रा निश्चित प्रारम्भ होगी।

5. मार्ग यही हैं। निर्णय आपका है। इसमें एक सामान्य श्वांस भीतर लें।

(3) कोऽहं ध्यान

(24 मिनट 40 सैकण्ड)

(1)

1. आँखें बंद! शरीर को कोई एक सुखद आसन दे दें। एक हाथ पर दूसरा हाथ टिका हुआ, हथेली गोद में आकाश की ओर खुली हुई।

2. यह एक शोध कार्य है, एक प्रश्न है।

3. आपका, आपसे, आपने आज तक जो भी जाना, जो भी समझा, वर्तमान में जो भी समझ रहे हैं।

4. क्या आप वो है या

5. उससे परे आपका कोई अस्तित्व हैं।

6. आपका कोई अन्य सत्य हैं।

(2)

1. इस भव में पुरूष का देह मिला तो क्या आप पुरूष हैं?
2. ये देह कब तक हैं। क्या इस देह में आने से पूर्व भी पुरूष थे।
3. क्या आयुष्य कर्म इस भव का पूर्ण होने के पश्चात् भी आप पुरूष रहेगें।

(3)

1. 'कोऽहं' पूछिये अपने आपसे मैं कौन हूँ? मेरी वास्तविकता क्या है? मेरी सच्चाई क्या हैं?
2. मैंने अपने को आज तक क्या माना हैं?
3. माँ की गर्भ में आने से पूर्व मैं कौन था?
4. श्वांसे थमने के बाद मैं क्या रहुँगा?
5. कोऽहं मैं स्त्री, मेरा सौन्दर्य कब तक का है।
6. मैं मनुष्य हूँ तो ये मनुष्य की काया कब तक है?
7. इस काया के छूटने के पश्चात् मेरा क्या अस्तित्व है?

(4)

1. मैं बाल हूँ, युवा हूँ, वृद्ध हूँ, कौन हूँ? कोऽहं?
2. मैं धनवान हूँ, सेठ हूँ, व्यापारी हूँ, गुरू हूँ,, शिष्य हूँ? मैं कौन हूँ? पूछो अपने आपसे कोऽहं?
3. मैं जैन हूँ, अजैन हूँ? कौनसा पंथ परम्परा का हूँ?
4. मैं कौन हूँ? मेरा अस्तित्व क्या है? कोऽहं?... कोऽहं?... कोऽहं?

(5)

1. पूछते जाओ, ये प्रश्न? आपका निजी प्रश्न है। इसका समाधान आपको आप ही के भीतर से मिलेगा।
2. महावीर आदि समस्त तीर्थंकर भगवन्तों में
3. वो समस्त आत्मायें जो सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हुए अपनी शोध करके हुए, अपने को जान कर हुए।
4. अपने को जाने बिना हम मात्र क्रिया कर रहे हैं। वो धर्म नहीं हैं।

(6)

1. कोऽहं इस देह को पाने से पूर्व, इस कुल में जन्म लेने से पूर्व,
2. मनुष्य भव प्राप्त करने से पूर्व भी तुम्हारा अस्तित्व था।
3. तुम कौन हो, कोऽहं?
4. आज जिन्हें मनुष्य की काया मिली
5. कभी उन्हें तिर्यंच की काया भी मिली थी।
6. कभी नरक में नारकी की भी मिली थी।
7. कभी देव देह भी धारण करके आये।
8. जो देव हैं वो कभी मनुष्य भी थे।
9. जो नरक में हैं वो कभी पशु भी थे।
10. वो कौन है जो चार गति में यात्रा कर रहा है?

(7)

1. 'कोऽहं' सारी मिथ्या पहचान को छोड़ते जाओ

1. मैं मनुष्य, मैं पुरूष, मैं स्त्री, मैं माँ, मैं पिता, मैं सम्बन्धी

2. मैं व्यापारी, मैं धनवान, मैं श्रावक----------

3. इससे परे तुम्हारा अस्तित्व है।

4. तुम्हारा सत्य है।

5. जो कल था, आज है।

(8)

1. अपने सत्य को जानो, सत्य पर श्रद्धा करो।

2. आत्मा ये शब्द नहीं हैं। जिसे हमने कहा, आपने श्रवण कर लिया, मान लिया।

3. आत्मा आपका अस्तित्व है। आप हैं।

4. जिसके होने से देह क्रिया करती है।

5. पांचों इन्द्रियाँ अपना कार्य करती हैं।

6. मन, बुद्धि कार्य करता है।

7. जिसके होने से देह है।

8. जिसके छूटते ही देह श्मशान में राख बनेगी।

(9)

1. आप वो तत्व हैं। वो सत्य हैं।

2. आँखों से दिखता नहीं। कानों से जिसकी आवाज सुनाई नहीं देती। जिसका स्वाद नहीं। स्पर्श नहीं। जिसकी सुगन्ध-दुर्गन्ध नहीं। आप वो सत्य हैं।

3. जो न पुरूष है, न स्त्री है, जिसका कोई लिंग नहीं।

4. कोई जाति, कोई परम्परा नहीं। आप वो सत्य हैं।

5. जिसे भूख नहीं, जिसने अन्न का एक दाना ग्रहण नहीं किया।

6. जिसे गर्मी नहीं, सर्दी नहीं। जिसमें रोग नहीं, शोक नहीं।
7. क्रोध नहीं, मान नहीं, माया नहीं, लोभ नहीं।
8. राग नहीं, द्वेष नहीं, आप वो तत्व हैं।

(10)

1. 'सोऽहं' आप और हम एक समान हैं।
2. आप और सिद्ध एक समान हैं।
3. आप और आचार्य एक समान हैं।
4. आप और उपाध्याय एक समान हैं।
5. आप और साधु का मूलतत्व एक समान हैं।
6. नरक का नारकी, स्वर्ग का देव, पशु-पक्षी, भारत महाविदेह, ऐरावत, पन्द्रह कर्मभूमि में विचरने वाला हर जीव एक समान हैं।

सोऽहं

(11)

1. 'सो' यानि वो आत्मा 'हं' यानि मैं आत्मा दोनों एक समान हैं।
2. ये आत्म परमात्मा मिलन की ध्वनि है।
3. आप मुख से कोई आवाज नहीं करेंगे।
4. 'सो' की ध्वनि पर आपका ध्यान आपके गुरू, आपके इष्ट पर जाये। उनके मूलतत्व पर जायें।
5. 'हं' की ध्वनि पर आपका ध्यान आप स्वयं शुद्ध आत्म तत्व पर आयें।
6. सोऽहं, सोऽहं, सोऽहं, सोऽहं, सोऽहं, सोऽहं, सोऽहं, सोऽहं, सोऽहं इसी शान्ति में बने रहें।

7. आज समस्त भेद रेखाओं का अन्त हो गया है।
8. समस्त शिकायतों का अन्त हो गया हैं।
9. सारी ऊँच-नीच मिट गयी हैं। जो मैं हूँ वो हर देह में हैं जो सबमें हैं वही मैं हूँ।

(12)

1. कोई निंदनीय नहीं, कोई घृणा का पात्र नहीं। कोई राग करने योग्य नहीं।
2. आप आत्मा हैं
3. अपने सत्य पर श्रद्धा रखें।
4. समस्त क्रियाओं का कर्ता यह देह है। आप आत्मा है।
5. देह बदलते हैं आप शाश्वत हैं।
6. अपने को जानने से मुक्ति की यात्रा जीव प्रारम्भ करता है।
7. अभी आपने मात्र श्रवण किया है और स्वीकार किया हैं।
8. जब तक आपका अन्त:करण पूर्ण रूप से न स्वीकारे।
9. आप इस सत्य में जीना प्रारम्भ न करें। बार-बार अपने से प्रश्न कीजिए।

(13)

1. मैं कौन हूँ?
2. क्रोध किसे आ रहा है?
3. भूख किसे लग रही है?
4. गर्मी बेचैनी किसे हो रही है?
5. कौन स्वयं को कर्ता मान रहा है?
6. मेरा अस्तित्व क्या है?

7. मैं कहाँ से आया हूँ?
8. मुझे जाना कहाँ हैं?
9. इस जीवन का उद्देश्य क्या है?
10 हर प्रश्न का समाधान आपको आप ही के भीतर से मिलेगा। इसी में एक सामान्य श्वांस भीतर लें। धीरे-धीरे छोड़ दें। जब भी लगें आँखें खोल सकते हैं।

(4) मैं और मेरा ध्यान

(1)

1. आँखें बन्द। आज किसी अन्य को नहीं।
2. स्वयं को देखना है।
3. ये यात्रा वीतराग यात्रा बनें।
4. देह सुखद आसन पर स्थित हैं।
5. एक हाथ पर दूसरा हाथ टिका हुआ है।

(2)

1. जो-जो भी आज तक मेरा मान कर रखा उसे बिसराते जाओ।
2. मेरा धन, मेरा परिग्रह, मेरे सम्बन्धी, मेरी विद्वता
3. मेरी मालकीयत, मेरी घड़ी, बंगला, मेरा चश्मा
4. मेरा हृदय, मेरे हृदय की धड़कन, मेरी आंते
5. मेरी बुद्धि, मेरी सोच

6. मेरी भूख, मेरी प्यास
7. मेरा कुल, मेरी परम्परा
8. जिस, जिससे भी मोह किया
9. जिस, जिसको मेरा मानकर रखा
10. जो-जो आपकी मुक्ति में बाधक बना
11. उन सबको बोसिरा के देखिए
12. सबको पकड़ने में सुख नहीं था।

(3)

1. सुख त्याग में हैं। सुख बोसिराने में हैं।
2. मेरे गहने, मेरा सौन्दर्य
3. मेरा, मेरा, मेरा सब छोड़ते जाओ।
4. जैसे मृत्यु के पश्चात् सब छूट जाता है
5. वैसे आज सब छोड़ दो
6. आज मिथ्यात्व की मृत्यु हो रही है
7. सम्यक्त्व की विजय हो रही है। 6मिनट

(4)

1. मेरा पुरूष का देह, मेरा स्त्री का देह, मेरा सौन्दर्य
2. मेरा मनुष्य का देह, मेरी विद्वता, मेरा शास्त्र
3. मेरी मुखवस्त्रिका, मेरी माला
4. मेरा स्थान, मेरा बंगला, मेरी घड़ी, मेरे आभूषण

5. मेरे सम्बन्धी, मेरे माता, मेरे पिता, मैं माँ, मैं पिता

6. इस सारे मिथ्यात्व को बोसिराओ

(5)

1. मेरा मेरा सब छूटेगा, निश्चित छूटेगा

2. ये मेरे का मोह ही हमारे पतन का कारण बना हुआ है।

3. सब मेरा, मेरा बोसिरा के एक मैं तत्व में आओ।

4. मैं यानि आत्मा, जो था, जो है, रहेगा। जो शाश्वत है।

5. अपने तत्व में, अपने शुद्ध तत्व में अपने को स्थिर कर लो। कुछ क्षण के लिए शांत बने रहो।

6. अन्तिम अवस्था शून्य की है याद रहे आपकी आँखें बन्द रहेंगी। आप एक गहरे प्रयोग से गुजर रहे हैं..... और गहरे में स्थित रहे।

(6)

1. किसी विचार को महत्व नहीं देंगे

2. जो मन में, बुद्धि में एकत्रित करके रखा था वही विचार बनकर निकल रहा है। उसे निकलने दो

3. आप अपने स्वभाव में बनें रहो। आपका स्वभाव जानना और देखना है।

9 मिनट 30 सैकण्ड से

(7)

1. मैं आत्मा हूँ...

2. ध्यान में न तो विचारों की श्रखंला बनें

3. न विचारों से संघर्ष करें। मात्र अपने स्वभाव में रहे। यानि द्दष्टा भाव में रहें।
4. जो आ रहा है वो चला जायेंगा। जो भरा है वो खाली हो जायेगा।

(8)

1. पुन: सोचिये क्या मेरे का मोह मुझे सुख देगा
2. या मैं तत्व में विद्यमान अनन्त सुख मुझे सुख देंगा।
3. मेरा लिंग, मेरी जाति, मेरा सम्प्रदाय को पकड़कर रखने वाले क्या शुद्ध, बुद्ध, मुक्त हुए है?
4. मैं तत्व में जीने वाले, शुद्ध आत्म तत्व में जीने वाले क्या संसार में टिक पाए है।

(9)

1. दो वाक्य हैं - मैं शरीर और मेरी आत्मा
2. प्राय: मिथ्यात्वी इस वाक्य का उपयोग करते हैं।
3. इसे बदलकर सम्यक्त्व में आओ
4. मैं आत्मा और मेरा शरीर

(10)

1. जो मेरा हैं वो छूटेगा। जो मैं है वो शाश्वत।
2. मैं का अभिप्राय अंहकार नहीं आपका शुद्ध तत्व है।
3. जिसके होने से देह क्रिया करता है।
4. आँखों में देखने की क्षमता है
5. कानों में सुनने की क्षमता है

6. नासिका में सुगंध लेने की क्षमता है
7. जिह में रस लेने की क्षमता है
8. देह स्पर्श का अनुभव करता है
9. मन कार्य करता है
10. बुद्धि कार्य करती है
11. जिसके होने से, आप आत्मा के होने से यह देह हैं।
12. देह का अस्तित्व है।
13. आपके निकल जाते ही देह श्मशान में जलेगी। परिवार के सदस्य इसे जलाकर इसका अन्तिम संस्कार कर घर लौटेंगे और धीरे-धीरे अपना संसार आपके बिना प्रारम्भ करेगा।

(11)

1. ये मेरे का मोह आपकी मुक्ति में बाधक बनकर खड़ा हैं।
2. जहाँ मेरापन है, जहाँ कर्तापन हैं। वो सब छोड़कर
3. हे आत्मन! अपने स्वभाव में ज्ञाता-दृष्टा भाव में आ
4. तुम सुखी हो जाओगे
5. तुम सिद्ध हो जाओगे

(12)

1. आप आत्मा हैं।
2. इसी सत्य में रहते हुए एक सामान्य श्वांस भीतर लें। धीरे-धीरे छोड़ दें।
3. जब भी आपको लगें दोनों हाथ आँखों पर कोमल सा स्पर्श आप अपनी आँखें खोल सकते हैं।

(5) योग-निद्रा

(33 मिनट 10 सैकण्ड से)

(1)

1. आँखें बंद। शरीर शव की भांति धरती पर पड़ा है।
2. दोनों हाथ शरीर के दोनों ओर हथेली आकाश की ओर खुली हुई। दोनों पांव में थोड़ा फासला
3. बाहर के संसार से इस जीवात्मा का वर्तमान समय में कोई वास्ता नहीं।

(2)

1. योगनिद्रा का अभिप्राय हैं:- एक योगी की भांति, संन्यासी की भांति, एक फकीर की तरह, एक साधु की तरह, मुनि की तरह देह को विश्राम करवाते हुए भी अपने सत्य में बने रहना, अपने अस्तित्व में रहना।
2. मैं हूँ वो सबमें हैं इस दृष्टि को अपनाना।
3. योगनिद्रा का अभ्यास प्रारम्भ करने से पूर्व कुछ संकल्प है जो आप आपके स्वयं से करेंगे।

(3)

1. पहला संकल्प पूरे प्रयोग के अन्तर्गत मैं अपने शरीर के अंगोपागों को किन्चित मात्र भी हिलाऊँगा, डुलाऊँगा नहीं। कारण चाहे कोई भी बनें।
2. गर्मी लगे, मक्खी-मच्छर के आताप आये, देह के किसी अंगोपांग में पीड़ा हो
3. मैं आत्मा अपने स्वभाव में याने दृष्टा भाव में रहूँगा
4. मैं केवली नहीं हूँ पर केवली सम बनकर रहूँगा।
5. जिन्हें आज तक मैंने पूजा हैं, नमन किया है, वन्दन किया हैं।

6. जैसा जीवन वर्तमान में वो जी रहे हैं मैं वैसा जीवन इस योगनिद्रा के अभ्यास के अन्तर्गत जीऊँगा।

(4)

1. पूरे प्रयोग के अन्तर्गत मैं निद्रा या आलस्य में नहीं जाऊँगा। इस संकल्प को भी पुन: मन ही मन दोहराइये।
2. मैं विचारों के पीछे नहीं दौडूंगा।
3. मैं विचारों से कहानी नहीं बनाऊँगा।

(5)

1. ये देह एक शव की भांति बन चुका है।
2. आत्म बोध के पश्चात् मैं अपनी यात्रा प्रारम्भ कर रहा हूँ
3. जड़ को जड़ मानता हूँ, चेतन मानता हूँ, दोनों में भेद जानता हूँ, दोनों के गुणधर्म को जानता हूँ।
4. इस साधना कक्ष में उपस्थित प्रत्येक साधक में उसी शुद्ध चैतन्य का दर्शन कीजिए।

(6)

1. जो आपके इष्ट में हैं आपके गुरू में है।
2. पुरूष और स्त्री का भेद मिटा दीजिए
3. रागी और द्वेषी का भेद मिटा दीजिए
4. अपने और पराये का भेद मिटा दीजिए
5. सही और गलत का भेद मिटा दीजिए
6. अमीरी-गरीबी का भेद मिटा दीजिए

7. सबको एक समान जानिए
8. प्रत्येक आत्मा में अष्टगुणों की सम्पदा हैं।
9. प्रत्येक आत्मा में सिद्ध होने का सामर्थ्य हैं।

(7)

1. जो आज सिद्ध हैं कभी उनके साथ भी हमारा सम्बन्ध रहा होगा।
2. जिनके साथ वर्तमान में सम्बन्ध बनाये बैठे है वो भी सिद्ध होंगे। आज कोई भेद शेष न रहें।
3. प्रत्येक आत्मा में परमतत्व विद्यमान हैं।
4. सबका जड़ छूटने वाला है। समय आयेगा एक-एक का जड़ छुट जायेंगा। आत्मा नया भव धारण करेगा।

(8)

1. स्वीकार करो, कोई निंदनीय नहीं
2. कोई राग करने योग्य नहीं, सबका देह अशुचि भरा है
3. नौ द्वारों से अशुचि निकलती है
4. अशुचि के इस पिण्ड से मोह तोड़ दीजिए।
5. सर के सिरे से पांव के अंगुठे तक इस साड़े तीन हाथ की काया में अपने स्वरूप को जानो
6. अपने होने को महसूस करो
7. आत्मा कोई शब्द न रह जायें
8. अपने अस्तित्व में उतरना प्रारम्भ कीजिए

(9)

1. भूल जाइये आप पुरूष हैं या स्त्री हैं या मनुष्य है
2. भूल जाइये आप किसी की माँ है, पिता हैं या अन्य कोई सम्बन्धी हैं।
3. भूल जाइये आप व्यापारी है।
4. भूल जाइये की आप किसी के यहाँ सेवा का कार्य कर रहे हैं।
5. आप श्रावक हैं या जैन कुल में जन्म लिये हैं।

(10)

1. अपने सत्य को याद रखिये
2. सर के सिरे से पाँव के अंगुठे तक एक सत्य
3. इसका रंग, रूप आकार नहीं
4. इसका स्वाद नहीं
5. पांचों इन्द्रियों से परे है ये तत्व
6. अपने मूलतत्व में आओ
7. मन से, बुद्धि से, अन्त:करण से सत्य और असत्य में भेद जान लो
8. जड़ और चेतन में भेद डालो
9. चेतन को जो कुछ मिला है वो है अष्टगुणों की सम्पदा

(11)

1. जड़ पर जो उदय में आ रहा हैं। उसका मूल कारण है। जीव का स्वयं का किया हुआ भव-भव का कर्म
2. ऐ जीव अपने में आ सर के सिरे से पाँव के अंगुठे तक आत्म प्रदेशों को महसूस कर

3. तेरे पास, तेरे अलावा, तेरा अन्य कुछ नहीं हैं, कोई नहीं हैं।
4. ये नाम भी पराया हैं। ये लिंग भी पराया हैं। ये गति भी परायी हैं। ये सारी सम्पदा परायी हैं। ये सारा परिग्रह पराया है।
5. तू तेरे स्वयं में आ जा।

(12)

1. तेरे भीतर अनन्त सुख बह रहा हैं।
2. वैसा ही सुख जिसका अनुभव सिद्ध करते हैं, अरिहंत करते है, केवली करते हैं।
3. वो अनन्त सुख का स्रोत स्वयं तू स्वयं हैं
4. अनन्त ज्ञान का पुन्ज है तू
5. तुझमें केवलज्ञान समाया हैं
6. बुद्धि का ज्ञान छूटने वाला हैं
7. तीन लोक एक साथ जानने देखने का ऐ जीव! सामथ्र्य तेरे पास हैं।
8. और भीतर आ जाओ।
9. सर के सिरे से पाँव के अंगुठे तक अपने होने को महसूस करें।
10. देह में पीड़ा हो रही हैं उसे होने दो आत्मा ज्ञाता-दृष्टा हैं। ये पीड़ा देह की हैं आपकी नहीं।

(13)

1. आप आत्मा हैं। उसे जानो, देखो और अपने भारी कर्मों को क्षय हो जाने दो
2. एक योगी विश्राम की अवस्था में भी कर्म क्षय करता हैं
3. एक भोगी जागरूक अवस्था में भी कर्म का बंधन बांधता है।
4. अभी तक भोगी बनकर जिये, अब योगी बनकर जियो...

(14)

1. तुमने पढ़ा था जीव और अजीव तत्व जुदा हैं
2. जीव को अजीव मानना और अजीव को जीव मानना मिथ्यात्व हैं। आज मिथ्यात्व को तोड़ दो।
3. अनन्त सुख से सम्पन्न निज तत्व को देखो।
4. इसे धन, दौलत, रिश्ते नातों की आवश्यकता नहीं।
5. इसे गर्मी में पंखे की और सर्दी में देह पर किसी मोटे वस्त्र की आवश्यकता नहीं।

(15)

1. अनन्त सुख से सम्पन्न आत्मा, आप आत्मा
2. सिद्ध समान आत्मा, केवली समान आत्मा
3. ना मालूम कहाँ से यात्रा प्रारम्भ हुई, चार गति चौरासी लाख जीव योनि में ये जीवात्मा विचरण कर चुका हैं।
4. अपने में स्थित होकर ही अपने में उतर कर ही ये अपना कार्य सिद्ध करेंगा।

(16)

1. आज इसी सत्य को सात नरक के प्रत्येक नारकी में देखिए, जानिए।
2. तिर्यंच प्राप्त की हुई प्रत्येक देह में जानिए
3. जिन जीवों को सताया जिसका घात किया
4. जिन पत्तों को तोड़ा, जिस घास पर चलें
5. जिस वनस्पति का प्रयोग किया
6. सबमें अपने समान तत्व को देखो

7. प्रत्येक मनुष्य में चाहे आपके घर में काम करने वाला आपका सेवक हो
8. सड़क पर भीख मांगता भिखारी हो
9. कोई कोढ़ी हो
10. किसी ने आपको ठगा हो
11. किसी ने आपका दिल दुखाया हो
12. किसी के साथ रागात्मक सम्बन्ध हो
13. सबमें एक समान तत्व को देखो
14. 26देवलोक में विचरने वाले प्रत्येक देवी-देवता में यही तत्व समाया है।
15. सबका मूल तत्व, सबका चैतन्य एक समान हैं

(17)

1. सोऽहं, सोऽहं, सोऽहं, सोऽहं
2. इसी शांति में बने रहें।
3. ध्यान रहे आप निद्रा में नहीं जायेंगे
4. ध्यान रहे आप अपनी देह के अंगो पांगों को किन्चित मात्र भी नहीं हिलायेंगे
5. ध्यान रहे जड़ का मोह तोड़ कर आप चैतन्य में स्वयं को स्थिर करेंगे।
6. शांत व शून्य अवस्था को प्राप्त करेंगे। 20 मिनट 55 सैकण्ड से
7. आप आत्मा हैं 21 मिनट
8. स्वरूप में बने रहकर विश्राम कीजिए
9. यहाँ विश्राम में मूच्र्छा नहीं हैं, बेहोशी नहीं है
10. विश्राम भी जागरूकता पूर्व हो रहा हैं (22 मिनट 40 सैकण्ड से)

(18)

1. अपने भीतर के अनन्त सुख का एहसास कीजिए
2. यह सुख किसी पुद्गल के अधीन नहीं हैं।
3. इस पर आपका अधिकार शाश्वत है
4. अनादि से आपके पास है परन्तु मूर्च्छा के कारण इसका अनुभव नहीं कर पाएं
5. आज जड़ में पीड़ा हो रही हैं तब भी भीतर में अनन्त सुख का अनुभव हो रहा है इसमें और गहरे जाओ

(19)

1. अनन्त यानि जिसकी आदि और अंत नहीं
2. जिसे शब्दों में नहीं कहा जा सकता
3. अनन्त सुख आपके पास है।
4. सुखी होने के लिए जिन धर्म में, जैन कुल में जन्म लेने के पश्चात् भी अनेंको हिंसाए की वो मिथ्यात्व था, वो प्रमाद था, वो अज्ञान था।
5. सुख आपमें हैं अनन्त हैं । 25 मिनट 18सैकण्ड से

(20)

1. आज इस देह में हो
2. कभी पशु के देह में थे। कभी नारकी के देह में गए। कभी देव देह में गए।
3. ना मालुम इस देह के छूटने के पश्चात् कौनसा देह मिलें और कितने भव लेने पड़े।
4. कब से यात्रा चल रही हैं। कब जाकर इस यात्र का अंत होगा, आप नहीं जानते।

5. भव-भव सुख के लिए तड़पे हो
6. सुख के भिखारी बनें हो
7. सुख के मालिक बनो
8. अपनी मालकियत अपनी सम्पदा को जानो
9. अपने सत्य को जानो

(21)

1. एक सत्य को जान लिया, सत्य में जीना प्रारम्भ कर लिया।
2. फिर यात्रा सीमित होने वाली हैं
3. जब तक सत्य को नहीं जाना, तब तक यात्रा प्रारम्भ नहीं हुई।
4. आज अपने घर के प्रत्येक सदस्य में अपने समान तत्व देखो।
5. प्रत्येक देह में अपने समान तत्व देखो।
6. अपनी देह पर आने वाले सुख और दुःख के कारण को जानो
7. जो अपने सत्य में पूरी स्थित हो चुके है उस प्रत्येक जीव को नमन करो
8. जो सत्य की राह पर चलना प्रारम्भ कर चुके हैं। उस प्रत्येक जीव को नमन करो और
9. अपने आपसे संकल्प करो मैं आत्मा हूँ इस सत्य को पूर्ण रूप से जीने का पुरूषार्थ करूंगा (29 मिनट 57 सैकण्ड से)

(22)

1. अपने सत्य में रहते हुए, अपने जड़ को देखिए
2. जड़ की मांगो को देखिए
3. मन की मांग को देखिए

4. बुद्धि के निर्णय को देखिए
5. और इन सबको, जानने, देखने वाले निज चैतन्य को जानिए

(23)

1. आप आत्मा हैं आप आत्मा है आप आत्मा है
2. आप अकेले हैं
3. भरी भीड़ में अकेले भरे परिवार में अकेले
4. संघ समाज में अकेले
5. देह में आत्मा, देह से भिन्न आत्मा
6. अनन्त सुख से सम्पन्न आत्मा
7. अष्ट गुणों से युक्त आत्मा
8. केवली समान आत्मा
9. आप आत्मा, हम आत्मा सोऽहं सोऽहं सोऽहं सोऽहं 32 मिनट 20 सैकण्ड से

(24)

1. अपने स्वभाव में रहते हुए यानि
2. ज्ञाता-दृष्टा भाव में रहते हुए
3. अपने पाँव को थोड़ा हिलाइए
4. हाथों की मुठ्ठीयों को खोलिए और बंद कीजिए
5. गर्दन को दाये-बाये हिलायें
6. होठों को खोलिए और बंद कीजिए
7. और धीरे-धीरे से स्वरूप में बनें रहते हुए

8. अपनी इस जड़ काया को करवट दें
9. और बन्द आँखों सहित इसे करवट दें और
10. बन्द आँखों सहित इसे उठाकर बिठा दें।
11. जब भी आपको लगें दोनों हाथ आँखों पर कोमल सा स्पर्श आप अपनी आँखें खोल सकते हैं।

(6) आलोचना

(27 मिनट 37 सैकण्ड)

(1)

1. आँखें बन्द रखिए
2. शरीर को कोई एक सुखद आसन दे दीजिए
3. पूरे वर्ष भर में इस पूरे जीवन भर में चार गति चौरासी लाख जीवयोनियों में विचरने हुए
4. अपने को देह मानकर, मिथ्यात्व के अन्तर्गत, अज्ञान के अन्तर्गत
5. जितने भी कर्म के बन्धन बांधे
6. आज एक बार अपने गुरू स्वयं बनकर
7. उस प्रत्येक भूल का निरीक्षण करते हुए उसकी आलोचना, क्षमायाचना करते हुए शुद्धिकरण करेंगे।

(2)

1. जन्म हुआ तब से आज तक अपने को देह मानकर
2. अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए

3. और जहाँ इच्छा पूरी ना हुई
4. वहाँ कितना क्रोध किया
5. अपने गुरू बनकर देखो।

(3)

1. जीवन में जब-जब क्रोध आया
2. कितना क्रोध आया
3. क्रोध के उन क्षणों में कितने मिथ्यात्व में चले गए
4. कितनी बेहोशी में चले गए
5. धर्म को भूल गए
6. अधर्म में आ गए
7. कितने कर्म के बंधन बांध लिए
8. वो क्षण कितनी मूर्च्छा के क्षण थे।

(4)

1. जानते थे क्रोध करने से कर्म के बन्धन होते हैं परन्तु उस समय, उस अवस्था में, उस बेहोशी में
2. वो जाना हुआ ज्ञान, समझा हुआ ज्ञान, उसे बिसरा कर उसे भूलकर अनेकों कर्म के बन्धन बान्धे।
3. इस भव में पूर्व भवों में
4. अनादि से यात्रा करते हुए भव-भव में
5. जहाँ-जहाँ ए जीवात्मा क्रोध के कारण कर्म का बन्धन हुआ आज उसकी आलोचना कर लो।

(5)

1. अपने गुरू, आराध्य के समक्ष, मौजूद आत्मज्ञानी सद्गुरू के समक्ष या स्वयं के गुरू स्वयं बनकर
2. आज अपना वो गुनाह कबुल कर लो
3. पूरा जीवन भर अंहकार करते रहे
4. कभी कुल का, कभी सौन्दर्य का कभी परिवार का
5. कभी अपने जप-तप का, कभी परिग्रह का

(6)

1. देखो आज अपने को झांक कर देखो
2. कितना अंहकार किया इस जीवन में
3. कितने कर्म के बन्धन बान्धे
4. इनकी आलोचना कब करोगे?
5. न मालूम श्वांस कब टूट जायें
6. आज होशपूर्वक अपने इस कषाय की आलोचना कर लीजिए
7. अपने को इस कषाय से मुक्त कर लीजिए

(7)

1. हर प्रकार का पाप किया
2. अहंकार, क्रोध, माया, लोभ सब करते गये
3. प्रतिक्रमण भी किया तो बेहोशीपूर्वक किया
4. आज अपनी माया की आलोचना करो।

5. कितनी बार मन, वचन और काया की भिन्नता में जीये
6. उसी कारण आज भरत क्षेत्र में हैं।
7. और माया कर अपनी अधोगति के कारण बन रहे हैं।

(8)

1. अपने जीवन में, इस भव में, पूर्व भव में की गई माया की आलोचना कर लीजिए
2. देखिए जीवन में कितना लोभ हैं
3. धन का लोभ, परिग्रह का लोभ, पद-प्रतिष्ठा का लोभ
4. एक साधक को, एक आत्मार्थी को यह सब शोभनीय नहीं हैं।
5. इनका त्याग करें बिना, इनसे मुक्त हुए बिना
6. इनकी आलोचना किये बिना
7. ये यात्रा चार गति की यात्रा हैं
8. वीतराग यात्रा नहीं
9. अनिवार्य है। अपने गुनाह स्वीकार करना

(9)

1. मिथ्यात्व में कितना रस लेते रहें
2. देह को सजाने में, देह की इच्छाओं की पूर्ति में कहाँ-कहाँ रस लिया, उसकी आलोचना कर लो।
3. कितना समय मिथ्यात्व में गया, अज्ञान में गया, निद्रा में गया, प्रमाद में गया मूर्च्छा में गया
4. स्वयं को देह मान कर जो कोई क्रिया की आज उसकी आलोचना कर लो

5. आज तक की आयु में अधिकांश समय तुम्हारा मिथ्यात्व में स्वयं को देह मानने में बीत गया
6. कर्ता भोक्तापन में बीत गया
7. आर्त-रौद्र ध्यान में बीत गया
8. आज उसकी आलोचना कर लो
9. जब-जब धर्म को क्रिया माना
10. धर्म के कर्ता बनें उसकी आलोचना कर लो

(10)

1. जीवन में हुई निंदा, ईष्र्या विकथा उसकी आलोचना कर लो।
2. एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक जितने जीवों का घात किया, करवाया अनुमोदना उनकी आलोचना कर लो
3. घर बनाने में देह को सजाने में, धन कमाने में, परिवार चलाने में जितने आश्रव किये उसकी आलोचना कर लो।
4. निद्रा में जितना समय, जितनी रात्रि बीती उसकी आलोचना कर लो।
5. छ: काया के जीवों का जब कभी घात किया
6. गर्भपात किया, कराया
7. वासना भरा जीवन जिया
8. पर स्त्री, पर पुरूष की तरफ देखा
9. मन के गुलाम बनकर रहे।
10. बुद्धि से सही गलत के निर्णय लेते रहें उसकी आलोचना कर लो।

(11)

1. जब कभी पंच महाव्रतधारी साधु-साध्वी की
2. बारहव्रती की श्रावक श्राविका की
3. किस समकितधारी जीव की निन्दा, विकथा की उसकी उसकी आलोचना कर लो।
4. मुक्ति पर बढ़ते कदमों को संसार का मार्ग दिखलाया हो।
5. संसार में सुख खोजे हो
6. वो सुख सुविधा के साधन जुटाने में वो समस्त मिथ्या पुरूषार्थ किये।
7. उनके मिलने पर खुशी मनाई
8. संयोग में सुख खोजा, वियोग में दु:खी हुये उसकी आलोचना कर लो।

(12)

1. जीने की चाह रखी, मरने की इच्छा रखी
2. कर्म को दबाने का पुरूषार्थ किया
3. कर्मों से भगाने का पुरूषार्थ किया
4. कर्मों से डर गये यानि पाप कर्म से भयभीत हुए उसकी आलोचना कर लो।

(13)

1. हे जीवात्मन! मैं आत्मा हूँ इस सत्य को छोड़कर अन्य किसी पर श्रद्धा की उसकी आलोचना कर लो
2. और अपने सत्य को अन्त:करण से स्वीकार कर लो
3. इस देह को त्यागने के पश्चात् मुझे देवगति मिले मैं फिर से मनुष्य बनूँ।
4. फिर से मुझे ये सम्बन्धी मिले ऐसी कोई चाह रखी उसकी आलोचना कर लो।

(14)

1. मेरा परिग्रह बढ़े, मेरी धन-सम्पति बढ़े
2. मेरे सम्बन्धी बढ़े ऐसे जितने मिथ्या पुरूषार्थ किये उनकी आलोचना कर लो
3. इस भव में पूर्व भवों में, पुण्य कर्म के उदय से जब कभी कोई आत्मज्ञानी समक्ष आया, कभी उसकी निन्दा, विकथा की उसकी आलोचना कर लो।

(15)

1. पंचम आरा है चारों ओर मिथ्यात्व हैं
2. हे जीवात्मन् मिथ्यात्वियों के मध्य रहते हुए
3. अपने सम्यक्त्व को तुम्हें अपने पुरूषार्थ से परिपक्व करना होंगा
4. कर्मो को दबाना नहीं
5. उदय कर्म को समभाव से क्षय करना होगा।

(16)

1. चार गति चौरासी लाख जीवयोनि में मौजूद प्रत्येक जीव से क्षमा मांग लो
2. आपके घर, परिवार, संघ, समाज में मौजूद प्रत्येक देह में आत्मा का दर्शन करते हुए सदेह से क्षमा मांगो।

(17)

1. आचार्य भगवन् के चरणों में नमन
2. भगवन् कभी आपकी अविनय आसातना की हो हमें क्षमा करना
3. आप वीतराग पथ पर आगे बढ़ रहे है
4. प्रभो आपके चरणों में हम भी अपनी समकित को क्षायिक समकित में बदलें ऐसा आशीष दो।
5. इन्हीं वंदन, नमन, कृतज्ञता भरे भावों में आँखें बन्द रखें।
6. मंगल मैत्री का अभ्यास होगा।

मंगल मैत्री

पूरी सृष्टि के मंगल की कामना, नरक के नेरियों के लिए मंगल प्रार्थना, नरकों की उस भयंकर वेदनाओं से गुजरने वाले नेरियों के लिए मंगल प्रार्थना। हम भी कभी नरकों में गए। समता से आज अपनी उस योनि को पूर्ण कर मनुष्य बने। अब महाविदेह में जाएँ और वहां से मुक्ति के पथ पर स्वयं को अग्रसर कर दें।

तिर्यंच के पशु-पक्षियों के लिए मंगल प्रार्थना। आप भी समता से अपनी योनि पूर्ण कर महाविदेह में जाएँ, मनुष्य बनें और मुक्ति के पथ पर अग्रसर हों।

देवलोकों में विराजित देवी-देवताओं के लिए मंगल प्रार्थना। देवलोकों में सुख नहीं है। शाश्वत सुख सिद्धालय में है। समस्त मनुष्यों की मंगल की प्रार्थना। इन्हीं मंगल भावों और गहरे मंगल मैत्री का अब अभ्यास होगा।

नमस्कार अरिहंत को, नमस्कार सिद्ध भगवान।
नमस्कार शुद्ध धर्म को, हो सबका कल्याण॥

नमन करूं शासन देव को चरणन शीश झुकाए।
धर्मरत्न ऐसा दियो पाप निकट नहीं आए॥

नमन करूं शासन माताजी चरणन शीश झुकाए।
धर्मरत्न ऐसा दियो पाप निकट नहीं आए॥

नमन करूं गुरूदेव को, कैसे संत सुजान।
कितनी करूणा चित्त से, दिया धर्म का दान॥

रोम-रोम कृतज्ञ हुआ ऋण ना चुकाया जाए।
जीऊं जीवन धर्म को यही है उचित उपाय॥

खामेमि सव्वेजीवा सव्वे जीवा खमतुं में।
मित्ती में सव्व भूएसु, वैरं मज्झं न केणई॥

मैं करता सबको क्षमा सभी करें मुझको।
मेरे तो सब मित्र हैं, वैरी ना दिखे कोय॥

दूर रहे दुर्भावना द्वेष रहे सब दूर।
निर्मल-निर्मल चित्त में प्यार भरे भरपूर॥

अंग-अंग बहती रहे मैत्री ब्रह्म विहार।
मैत्री ही सुख-शांति का मोक्षपुरी का द्वार॥

आज नमन का दिवस है अन्तर भरी उमंग।
श्रद्धा और कृतज्ञता विनय भक्ति का रंग॥

नमन करे हम धर्म को धर्म बड़ा बलवान।
धर्म सदा रक्षा करे, धर्म करे कल्याण॥

धर्म-धर्म तो सब कहें, धर्म न जाने कोय।
धर्म चित्त की शुद्धता, धर्म शांति सुख चैन॥

सम्प्रदाय ना धर्म है, धर्म न बने दीवार।
धर्म सिखाए एकता, धर्म बढ़ाए प्यार॥

एक शरण है धर्म की और शरण नहीं कोय।
सत्य वचन के तेज से, जन-जन मंगल होय॥

सबका मंगल, सबका मंगल, सबका मंगल होय रे।
तेरा मंगल, तेरा मंगल, तेरा मंगल होय रे।
सबका मंगल, सबका मंगल, सबका मंगल होय रे।
तेरा मंगल, मेरा मंगल, तेरा मंगल होय रे।
जल के थल के और गगन के प्राणी सुखिया होय रे।
दशों दिशाओं के सब प्राणी-प्राणी मंगल लाभी होय रे।
दृश्य और अदृश्य जीवों का सबका मंगल होय रे।
सबका मंगल, सबका मंगल, सबका मंगल होय रे।
जन-जन मंगल, जन-जन मंगल, जन-जन मंगल होय रे।
निर्भय हो निर्वेर बने सब सबका मंगल होय रे।
दशों दिशाओं के सब प्राणी मंगल लाभी होय रे।
तेरा मंगल, तेरा मंगल, तेरा मंगल होय रे।
सबका मंगल, सबका मंगल, सबका मंगल होय रे।

सबका भला हो, सबका मंगल हो, सबका शुभ हो। सबका कल्याण हो। सबकी स्वस्थ मुक्ति हो, सबको धर्म मिले, महावीर का धर्म मिले, तीर्थंकर भगवन्तो का धर्म मिले, वीतराग धर्म मिले, आत्म दृष्टि से सम्पन्न धर्म मिले। सबकी जन्मों-जन्मो

की मुक्ति की प्यास फले। इसी मंगल भावना से एक लम्बा गहरा श्वांस ले। अरिहन्त परमात्मा के चरणों में वंदन, नमन और कृतज्ञता का भाव। दोनों हाथों को आंखो पे ले जाएं, हल्का सा स्पर्श धीरे से अपनी आँखें खोल सकते हैं।

'नमो अरिहन्ताणं'

आत्म-ध्यान साधना शिविर

बेसिक शिविर (एक दिवसीय)

- सुबह 9.30 बजे से प्रारम्भ होकर शाम 6.00 बजे तक

गम्भीर शिविर (चार, सप्त एवं ग्यारह दिवसीय : आवास सहित)

- गम्भीर शिविर प्रथम दिवस प्रातः 10 बजे प्रारम्भ होकर अंतिम दिवस सायं 5.00 बजे पूर्ण होगा।
- बेसिक शिविर किए हुए साधक चार दिवसीय शिविर में प्रवेश ले सकेंगे।
- चार दिवसीय गम्भीर शिविर किए हुए साधक ही सप्त दिवसीय शिविर कर सकेंगे।
- सप्त दिवसीय शिविर किए हुए साधकों को ग्यारह दिवसीय शिविर में आमंत्रित किया जाता है।

शिविर के नियम

- बेसिक शिविर में प्रार्थना, ध्यान, आसन, प्राणायाम, आलोचना एवं वीतराग सामायिक का प्रयोगात्मक प्रशिक्षण दिया जाता है। प्रत्येक गम्भीर शिविर के एक दिन पहले एक दिवसीय बेसिक शिविर होता है।
- साधकों को गम्भीर साधना शिविर में पूर्ण मौन रहना होगा।
- मोबाइल का प्रयोग आत्म ध्यान साधना शिविर में निषेध है।
- आत्म ध्यान साधना शिविर में जो कहा जाए वही करना होगा।
- गम्भीर साधना शिविर काल में साधकों को शिविर स्थल पर ही रहना होगा।
- गम्भीर साधना शिविर काल में बाहर के किसी व्यक्ति से सम्पर्क की अनुमति नहीं है।
- गम्भीर साधना शिविर के लिए सफेद ढीले वस्त्र लाएं। सामयिक के उपकरण साथ ला सकते हैं।
- साधक आवश्यक वस्त्र, चादर व योगासन हेतु दरी साथ लाएं।
- सभी शिविरों के लिए पूर्व रजिस्ट्रेशन आवश्यक है।

अध्याय - 2

आत्म ध्यान गुरु आचार्य डॉ. शिव मुनिजी

अरिहंत वह जिसने संसार को जीत लिया। मोह- माया, लोभ- लालच राग-द्वेष को त्याग दिया। तथागत वह जो (तथा) आया वैसा ही चला (गत) गया । कबीर के शब्दों में ज्यों की त्यों धर दीनी चदरिया। भगवान महावीर और बुद्ध ने यही किया।

महावीरत्व और बुद्धत्व व्यक्ति नहीं, व्यक्तित्व है। उन्होंने अपनी जिज्ञासा के समाधान के लिए तप-साधना की तो उन्हें मिला- कैवल्य या निर्वाण। इसे पाकर महावीर तीर्थंकर और बुद्ध तथागत बने और उन्होंने दुनिया को भी मोक्ष मार्ग बताया।

भगवान महावीर और बुद्ध तो बार-बार जन्म नहीं लेते पर उनके पद चिन्हों पर चलने वाले अवश्य जन्म लेते हैं और जन-जन को एक बार फिर याद दिलाते हैं कि जन्म और मरण पर मनुष्य का वश नही है पर इन दोनों के बीच एक घटना घटती है जीवन। यह मनुष्य के वश में है। जीवन जीने के दो तरीके हैं। एक होरिजोंटल लाइफ (सपाट; रूटीन जिदगी), जिसे जीनेवाले केवल बड़े और बूढे होते है- They grow old and just die. दूसरी वर्टिकल जिन्दगी (उर्द्धस्व; ऊपर उठती हुई)। जो यह जिन्दगी जीते हैं वे खुश रहते हैं और ख़ुशी बांटते हैं – They keep growing up.

जैन धर्मावलम्बियों के श्रमण संघ के आचार्य और जन जन के ध्यान गुरु डॉ. शिव मुनिजी ऐसे ही महामना है। उन्होंने भगवान महावीर की साधना पर आधारित आत्म ध्यान की खोज की है जो वर्टिकल जीवन जीना सिखाती है।

आइए जानें कैसे आत्मध्यान की खोज हुई और कैसे यह अब जन- जन का ध्यान बन रहा है।

डॉ. शिवमुनि (डी.लिट.) के दादाजी श्री मायारामजी व उनके अनुज श्री शादीलालजी मलौट के प्रतिष्ठित व्यापारी थे। मायारामजी के छोटे पुत्र चिरंजीलालजी का विवाह रानियाँमंडी (मलोट) निवासी श्री प्रभुमलजी की सुपुत्री विद्यादेवी के साथ हुआ था। यह दंपत्ति तीन पुत्र (राज, शिव,विजय) व चार पुत्रियों(पुष्पा, निर्मला, शुक्ला और प्रवीण) के माँ-पिता बने। दूसरे क्रम के पुत्र शिवकुमार का जन्म 18सितम्बर, 1942 को अपने ननिहाल रानियाँमंडी में हुआ। बाल्यावस्था में उन्हें अपने नाना स्व. प्रभुमलजी से पशुओं को चारा खिलाने, पक्षियों को दाना डालने और जरूरतमंदों की सहायता करने के संस्कार मिले। जैन साधु-संतों के सत्संग ने शिवकुमार के बाल्यकालीन मनमानस में जैन दर्शन का बीजारोपण कर दिया।

धार्मिक संस्कारों की बाल्यकालीन पृष्टभूमि के साथ शिवकुमार ने स्कूली परीक्षाओं में हमेशा सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया। छठी- सातवीं कक्षा में पहुंचते ही मूलत: एकांतजीवी शिवकुमार के जिज्ञासु मन-मानस में सवाल उठने लगे- जीवन क्या है? में कौन हूँ? कहाँ से आया हूँ? जहाँ हूँ वहां क्यों हूँ? कब तक हूँ? इसके बाद कहाँ जाऊँगा? मनुष्य क्यों जन्म लेता है, मृत्यु क्या है? जीवन का लक्ष्य क्या है या क्या होना चाहिए?

बारह-तेरह वर्ष की उम्र में शिवकुमार को जैन साधु-संतों की संगत इतनी रास आने लगी कि स्कूल की पढ़ाई के बाद वे स्थानक पहुंच जाते और वहां साधु-संतों के साथ समय व्यतीत करते। जैन साधु-साध्वियों से मिलने के बाद शिवकुमार ने उनके जैसा जीवन जीने की बात कही तो परिवार में हड़कंप मच गया। भाई-बहनों ने इसे मजाक समझा। उनकी सोच थी कि शिवकुमार सूट-बुट पहनते हैं, खाने-पीने व घूमने-फिरने के शौकीन हैं, ये दीक्षा क्या लेंगे? पिता ने सोचा कि पुत्र प्रोफेशनल शिक्षा प्राप्त करेगा तो विरक्ति की जिद छोड़ देगा। इस मंशा से वे शिवकुमार को मेडिकल कॉलेज में दाखिला दिलवाना चाहते थे। डॉक्टर बनने के लिए हिंसा (चीर-फाड़) जरूरी है यह जानकर शिवकुमार ने मेडिकल की पढ़ाई छोड़ दी। उन्होंने प्रभाकर की परीक्षा उत्तीर्ण की। पंजाब विश्वविद्यालय से बी.ए. और अंग्रेजी व दर्शनशास्त्र में एम.ए.की डिग्री प्राप्त की।

युवावस्था में गौरवर्णीय शिवकुमार बेहद सुंदर और स्वस्थ थे। स्मित मुस्कान से भरा चेहरा आकर्षक और लुभावना था। उनसे बिना पूछे दादाजी ने उनके लिए एक रिश्ता स्वीकार कर लिया। परिवारजन चाहते थे कि शिवकुमार एक बार लड़की देख ले। उससे बातचीत करे पर वे नहीं माने। कॉलेज में अध्ययन के दौरान युवा शिवकुमार को विदेश यात्रा का भी मौका मिला। परिवारजन खुश हुए। उनकी सोच थी कि शिवकुमार पश्चिमी देशों में घूमेगा। वहाँ के लोगों से मिलेगा तो शायद उसके मन से विरक्ति का भाव समाप्त होगा। सन 1971 में शिव कुमार अमेरिका, कनाडा, इंग्लेंड, कुवैत जैसे 51 दिन विदेश भ्रमण करके लौटे पर उनकी सोच नहीं बदली।

शिवकुमार का सोच था कि महावीर स्वामी ने महलों में विरक्त जीवन जिया और एक दिन सब कुछ छोड़कर साधना की। महावीर स्वामी की इस साधना का मर्म जानने और उसे जन-जन तक पहुँचाने के दृढ़संकल्प के साथ एक दिन शिवकुमार ने परिवार से दीक्षा की आज्ञा मांग ही ली। सबके मन में यह आशंका तो थी ही। परिवार को अनुमति देना पड़ी।

दस वर्षों के ऊहापोह और संघर्ष के बाद 17 मई, 1972 को मलौट मंडी (पंजाब) में शिवकुमार ने दीक्षा ग्रहण की तो उनका नाम हो गया शिव मुनि। गुरुदेव ज्ञानमुनिजी के साथ उनका पहला चातुर्मास मालेर कोटला में हुआ। वर्षावास की इस अवधि में गुरुदेव ने नवदीक्षित शिव मुनिजी को शास्त्र पढ़ाए। लोगस्स का जाप, प्रतिक्रमण और स्वाध्याय करवाया। शिवमुनिजी तो इसके भी आगे उस रहस्य से रूबरू होना चाहते थे कि भगवान महावीर की साधना क्या है? कैसे ज़ड़-चेतन का भेद कर उन्हें हरेक में आत्मा के दर्शन होने लगे थे?

पहला चातुर्मास पूरा होते ही पैदल विहार शुरू हुआ। तपती दोपहर में सुनसान इलाकों में पैदल चलते और रात्रि विश्राम करते हुए शिव मुनिजी के मन-मानस में सवाल उठने लगे। वे जैन साधु-संतों के जीवन को भी अब नजदीक से देख रहे थे। उन्होंने देखा कि चातुर्मास में प्रवचन, भक्तों का आवागमन, आहार, सुबह-शाम की साधना और जप में उनका दिन बीत जाता है। स्वाध्याय करते हुए वे प्रवचनकार बन जाते हैं। कई जैन साधु-संतों ने परमार्थ के लिए संस्थाएं खोल रखी हैं। उनके प्रोत्साहन और प्रयासों से सिलाई-बुनाई स्कूल और डिस्पेंसरी चल रही

हैं। वे स्थानक बनवाते हैं। वे अपने लिए धन संग्रहित नहीं करते पर इन सेवा कार्यों के लिए अपने धनी अनुयायियों से धन इकट्ठा करवाते हैं। वे पुरातन जैन साहित्य पढ़ रहे हैं पर उनके निहितार्थ तक नहीं पहुंचते हैं और न ही पुरातन ज्ञान को अपडेट कर रहे हैं। यही नहीं, जैन दर्शन भी सरल होकर जन-जन तक नहीं पहुँच रहा है। जैन साधु-संत अपने प्रवचन में यह अवश्य कहते हैं कि हर मनुष्य का सर्वोपरी लक्ष्य होना चाहिए मुक्ति, पर वे इसका सरल और सम्भव उपाय नहीं बताते हैं। उनकी साधना माला जाप, स्वाध्याय और तप पर ठहर गई है।

शिव मुनिजी के मन-मानस में यह सब देखकर सवाल खड़े होने लगे थे- क्या वे भी यही करेंगे? क्या उन्होंने भी यह सब करने के लिए ही दीक्षा ली है। वे सम्पन्न वैश्य परिवार में जन्मे थे। कुल परम्परा के अनुसार धनोपार्जन करते तो परिवार में रहकर भी समाज सेवा कर सकते थे।

ऐसे ऊहापोह से उबरने के लिए शिव मुनिजी जो भी वरिष्ठ साधु मिलता उनसे महावीर की साधना के बारे में सवाल पूछते। सबके पास एक ही जवाब था- परम्परागत साधना। शिव मुनिजी इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि वे सब तृप्त होकर वही दोहरा रहे हैं जो सहस्त्रों वर्षों से हो रहा है। उसकी गहराई में जाने और उसके आगे खोजने की चाह ही खत्म हो गई है।

क्या करूं? कहा जाऊं? कैसे मिलेगा महावीर की साधना और मुक्ति का मार्ग? इस सवालों से जूझते हुए एक दिन उन्होंने निर्णय लिया कि वे शोध करेंगे और शोध का विषय होगा- भारतीय धर्मों में मुक्ति की अवधारणा (विशेष जैन धर्म के सन्दर्भ में)। पांच वर्ष के शोध कार्य के दौरान शिवमुनिजी ने विभिन्न धर्म ग्रंथों में वर्णित मोक्ष के स्वरूप को समझा। उनका तुलनात्मक अध्ययन किया तो इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि सारे भारतीय धर्मों में कॉमन है-ध्यान।

इसके बाद डॉ. शिव मुनिजी चातुर्मास के बहाने ध्यान साधना के लिए भारत यात्रा पर निकल पड़े। संयोग से जयपुर में डॉ. शिव मुनिजी विपश्यना गुरु श्री सत्यनारायणजी गोयनका के ध्यान सेंटर पहुँच गए। उनकी खोज थी- बौद्ध धर्म की ध्यान प्रणाली को अनुभूत (समझना) करना। उनका सोच था कि भगवान महावीर और बुद्ध समकालीन थे। दोनों धर्म अनीश्वरवादी (ईश्वर- परमात्मा को कर्ता नहीं

मानना) है। अत: दोनों के ध्यान में भी समानता होगी। फर्क इतना ही है कि जैन धर्म आत्मा को केंद्र में रखता है जबकि बौद्ध धर्म आत्मा को अस्वीकार करता है।

डॉ. शिव मुनिजी ने चार ध्यान शिविरों में साधना की। हर बार आनंद की अनुभूति क्रमश: बढ़ती गई। उन्हें ध्यान साधना का एक मार्ग मिलने लगा था, पर इसके साथ सवाल खड़े होने लगे कि बुद्ध की ध्यान साधना आज भी सुरक्षित है। भगवान महावीर की साधना गुम हो गई है। वह साधना क्या थी? डॉ. शिव मुनि ने संकल्प लिया कि वे महावीर की कालातीत हो चुकी ध्यान साधना को पुनर्जीवित करेंगे और जन- जन तक पहुँचाएँगे।

डॉ. शिव मुनि ने ओशो की ध्यान पद्धतियों का भी अध्ययन और अभ्यास किया। सनातन परम्परा के बिहार स्कूल ऑफ योगा, मुंगेर के साहित्य को भी पढ़ा। उनके संन्यासी अनिल भूरट से भी योगा ध्यान व योगनिद्रा आदि के प्रयोग सीखे। तेरापंथ के आचार्य तुलसी एवं महाप्रज्ञ से ध्यान पर चर्चा की। उत्तर भारत, महाराष्ट्र व गुजरात में चातुर्मास के बहाने महावीर की ध्यान साधना के सूत्र खोजने के बाद डॉ. शिव मुनि ने इसी मंशा से दक्षिण भारत में प्रचलित ध्यान पद्धतियों का भी अध्ययन और अभ्यास किया। आर्ट ऑफ लिविंग और रैकी के कोर्स भी किए। इस दौरान उन्होंने ध्यान एक दिव्य साधना पुस्तक लिखी। इस ग्रन्थ का सार है सभी धर्मो में मोक्ष सर्वोपरी है और उसकी प्राप्ति का मार्ग ध्यान है। इस शोध ग्रन्थ को विद्वानों ने खूब सराहा तो विक्रमशिला यूनिवर्सिटी, भागलपुर ने डॉ. शिव मुनि को डी.लिट. की मानद पदवी से नवाजा।

दक्षिण भारत में विहार करते हुए डॉ. शिव मुनि श्रवण बेलगोला पहुँचे। पहाड़ों पर जिन गुफाओं में दिगम्बर सम्प्रदाय के पूर्वाचार्यों ने साधना की थी वहाँ डॉ. शिव मुनिजी ने भी ध्यान साधना की। भगवान बाहुबली की मूर्ति के समक्ष खड़े हुए तो डेढ़ घंटे में सहज ही कायोत्सर्ग हो गया।

डॉ. शिव मुनि ने दक्षिण भारत की यात्रा के बाद महावीर की ध्यान साधना की खोज के अपने प्रयासों की समीक्षा और आगे की कार्य योजना बनाने की मंशा से एक बार फिर एकांत ध्यान साधना करने का निर्णय लिया। नासिक में दो महीने की एकांत साधना के दौरान अरिहंत भगवान की साधना के गुढ रहस्य उन्हें मिलने लगे। डॉ. शिव मुनिजी ने

अंतरात्मा से मिलनेवाले संदेश आत्मसात किए। तदनुसार उन्होंने निर्णय लिया कि अब वे चातुर्मास में परम्परानुसार प्रवचन और धार्मिक क्रिया-कलाप करेंगे/करवाएंगे पर उनका फोकस होगा- ध्यान जिसका उन्होंने नामकरण किया- आत्म ध्यान।.

अब विहार करते हुए डॉ.शिव मुनि मार्ग के छोटे-बड़े शहरों/गांवों में ध्यान शिविर करवाने लगे। इनमें मिल रहे रिस्पांस से डॉ. शिव मुनि को लगने लगा कि भगवान महावीर की ध्यान साधना की खोज को पहला विराम मिल गया है और अब उन्हें इसे जन-जन तक पहुँचाना होगा।

26 अप्रेल 1999 को डॉ. शिवमुनि श्रमण संघ के चतुर्थ पट्टधर आचार्य बन गए। इस जवाबदारी का निर्वहन करते हुए भी वे अपने लक्ष्य से नहीं भटके हैं।

जन कल्याण के साथ वीतरागी जीवन की अदभुत मिसाल है आचार्यश्री डॉ. शिव मुनि। उनकी रीढ़ की हड्डी (स्पायनल कार्ड) की जटिल सर्जरी हो चुकी हैं पर वे हर आत्मध्यान शिविर में उपस्थित रहते हैं। हर साल तीन से चार माह वे एकांत साधना/ आत्म ध्यान करते है। प्रात: 4 बजे से 7.30 तक व्यक्तिगत साधना और आत्म चिन्तन उनकी दिनचर्या का अभिन्न हिस्सा है। दोपहर 1 बजे से मध्यान्ह 4 बजे तक वे आत्म ध्यान करते हुए आत्म चिन्तन में लीन रहते हैं। सायंकाल प्रतिक्रमण पश्चात कायोत्सर्ग की साधना करते हैं। वे 32 वर्षों से एकांतर तप कर रहे हैं। एक दिन केवल गर्म जल के साथ उपवास और एक दिन आहार लेते हैं।

इतनी कठोर और नियमित तप-साधना का सुफल है कि 76 वर्ष की उम्र में भी वे युवा हैं और 16घंटे व्यस्त रहते हैं। उनके चेहरे पर अदभुत आकर्षण है तो उनकी चिर परिचित मुस्कान सम्मोहित करती है।

उनके ही शब्दों में कहें तो उम्र एक संख्या के सिवाय कुछ नहीं है। यूँ भी आत्मध्यान करनेवाला न बुढा होता है और न ही थकता है, यही वर्टिकल जिन्दगी है।

अध्याय - 3

आत्म ध्यान गुरु डॉ. शिव मुनिजी के ज्येष्ठ शिष्य

आत्म योगी श्री शिरीष मुनिजी

कबीर किसी धर्म के नहीं थे इसलिए 600 साल बाद भी कबीर सारे धर्मों में मिल जाते है। आत्म ध्यान के अन्वेषक डॉ. शिव मुनिजी के ज्येष्ठ शिष्य और आत्म ध्यान शिविर के संचालक आत्म योगी श्री शिरीष मुनिजी के सानिध्य में आत्म ध्यान करें तो कबीर याद आने लगते हैं, जिन्होंने कहा था-

तन थिर मन थिर बचन थिर, सुरति निरति थिर होय,
कहें कबीर उस पलक को कल्प न पावै कोय।

(मन शांत हो, वचन स्थिर हो, सभी वृतियां शांत हो जाए और हम अपने आत्म स्वरूप में पहुँच हो जाए तो आत्म साक्षात्कार का यह अनमोल क्षण युग युगांतर में भी नहीं मिलता।)

श्रद्धेय शिवाचार्य के ज्येष्ठ शिष्य श्री शिरीष मुनिजी का जन्म 19 फरवरी 1964 को उदयपुर (राजस्थान) जिले के एक छोटे से गाँव नाई में हुआ। पिता श्री ख्यालीलालजी कोठारी और मातुश्री सोहनबाई ने नामकरण किया अशोक। माँ-पिता ने उनका धार्मिक संस्कारों के साथ लालन- पालन किया। 11 वीं कक्षा उत्तीर्ण करने के बाद पढ़ाई छोड़कर उन्हें मुबई आना पड़ा। यहाँ धर्मनिष्ठ वस्त्र-व्यवसायी के रूप में उनकी पहचान बनने लगी थी, पर उनके मन-मानस में तो वैराग्य रचा-बसा था। सन 1987 में डॉ. शिव मुनिजी चातुर्मास के लिए मुम्बई पधारे। अहिंसा हॉल, खार के ध्यान कक्ष में 48मिनट के सत्संग में युवा अशोक कोठारी ने जीवन

का लक्ष्य तय कर लिया। 27 वर्ष की उम्र में उन्होंने परिवार से दीक्षा की अनुमति मांगी। परिजन इस विछोह के लिए तैयार नहीं थे। दादी माँ मोहनबाई कोठारी ने परिजन को समझाया- मनाया। तीन वर्ष की प्रतीक्षा के बाद 7 मई 1990 को श्रद्धेय शिवाचार्यश्री ने यादगिरी (कर्नाटक) में उन्हें जैन भागवती दीक्षा प्रदान की। अब वे अशोक कोठारी से शिरीष मुनि बन गए।

श्री शिरीष मुनिजी 29 साल से जैनाचार्य डॉ. शिव मुनिजी के साथ विहार और चातुर्मास कर रहे हैं। इन वर्षों में शायद ही कोई दिन हो जो गुरु- शिष्य ने साथ साथ व्यतीत न किया हो। इतनी नजदीकी के कारण इन दोनों के रिश्ते को सांसारिक नजरिए से पिता- पुत्र का रिश्ता कह सकते हैं पर दोनों जैन मुनि है जो सांसारिक बन्धनों से मुक्त हो चुके है अ: इसे योग्य गुरु और सुयोग्य शिष्य की ट्यूनिंग कहना ही उपयुक्त होगा।

दीक्षा लेने के बाद श्री शिरीष मुनिजी ने अपने गुरु के सानिध्य में आगमों का गहन अध्ययन किया है। समग्र भारतीय दर्शन को समझा और ध्यान पर विशेष शोध कर रहे हैं। इसके लिए हिंदी, संस्कृत, प्राकृत, मराठी, गुजराती और अंग्रेजी को सीखा और एम.ए, की डिग्री भी हासिल की है । इन सबके बीच श्री शिरीष मुनिजी श्रमण संघ के प्रमुख मंत्री के दायित्व का भी सुचारू रूप से निर्वहन कर रहे हैं।

स्वाध्याय के साथ उन्होंने तप और ध्यान भी पूरे मनोयोग से किया। सन 1994 से वे एकान्तर तप कर रहे हैं यानि एक दिन छोड़कर आहार ग्रहण करते हैं। विगत 25 वर्षों से उनकी निजी योग और ध्यान साधना का परिणाम है कि उनकी वाणी, विचार और व्यवहार में आत्म ध्यान साधना की अनुगूँज सुनाई देने लगी है। श्री शिरीष मुनिजी की इन सबसे बड़ी उपलब्धि है- आत्म साधना शिविरों का संचालन। सैकड़ों आत्म ध्यान शिविरों और इनमें हजारों साधकों की साधना के वे साक्षी हैं। उनके अनुसार श्रद्धेय शिवाचार्यश्री की खोज आत्म ध्यान भगवान महावीर की तप-साधना का सरल और सम्भव रूपांतरण है. यह ऐसा आध्यात्मिक अभियान है जो सोच, स्वभाव और व्यवहार बदल देता है। इसका तात्कालीन परिणाम है- तनाव मुक्ति, शांति, सुख और आनंद।

अध्याय - 4

युवा मनीषी श्री शुभम मुनिजी, सहमंत्री, श्रमण संघ

23 जनवरी 1984 को सावल विहीर (शिरडी) महाराष्ट्र में किराना व्यापारी तेजराज पिपाडा के यहाँ जन्मी तीन संतानों में से एक पुत्र स्वप्निल को पिता चार्टर्ड अकाउंटेंट बनाना चाहते थे। ग्रामीण स्कूल से 7वीं कक्षा उत्तीर्ण करते ही पिता ने पुत्र को श्री महाराष्ट्रीय जैन विद्या भुवन,जुन्नर में दाखिला दिलवा दिया। वहां होस्टल में रहते हुए स्वप्निल ने हायर सेकेंडरी परीक्षा उत्तीर्ण की पर बालक के मन मानस को इस सवाल का जवाब नहीं मिला कि जीवन क्या है? पढो, नौकरी-व्यापार करो, विवाह करो, माँ-पिता बनो? स्वप्निल ने अपने गाँव में पति-पत्नी को छोटी- छोटी बातों पर लड़ते-झगड़ते और समझौता करके जीते हुए देखा था।

मनुष्य बुद्धिमान प्राणी है। वह समझौतापरस्त जीवन क्यों जीए? इस सोच के साथ स्वप्निल ने हॉस्टल में स्कूली शिक्षा के साथ स्थानकवासी होते हुए मन्दिर मार्गी श्वेताम्बर मूर्ति पूजा परम्परा के विधि- विधान सीखे। ध्यान योगी श्री हंसमुख मुनिजी की प्रेरणा से धार्मिक पुस्तकों का अध्ययन किया। वैरागी जीवन के प्रति अनुराग बढने लगा था कि एक संयोग बना। सन् 2000 में पदयात्रा करते हुए डॉ. शिव मुनि का संगमनेर से नासिक की और पदार्पण हुआ। स्वप्निल अपने बड़े पिताजी के साथ उनके दर्शन को पहुँचा। 10 मई 2000 को अपने पिता से दीक्षा लेने की अनुमति मांगी। माँ निर्मलाजी ने पहले तो विरोध किया पर फिर अपने पुत्र को जैन धर्म की सेवा के लिए अर्पित कर दिया। 18मई 2000 को दीक्षा के बाद बालक का नामकरण हुआ श्री शुभम मुनि।

आचार्य श्री डॉ. शिवमुनिजी ने श्री शुभम मुनिजी को षड दर्शन और जैनागम का अध्ययन करवाया। हिंदी और मराठी शुभम मुनिजी की मातृभाषा है। उन्होंने गुजराती, मारवाड़ी, पंजाबी, संस्कृत, प्राकृत और अंग्रेजी का भाषा ज्ञान प्राप्त किया। जैन विश्वभारती यूनिवर्सिटी से एम.ए.(जैन धर्म) की डिग्री हासिल की। सन् 2004 से उन्होंने स्वयं को गुरू आज्ञा अनुसार गुरू सन्निद्धि में आत्मध्यान साधना में लगाया। गायन कला में दक्ष शुभम मुनिजी ने 2007 में बाल संस्कार शिविरों में 6000 हजार से ज्यादा बच्चों को संस्कारित किया है। इसी साल अम्बाला में उन्हें युवा मनीषी की उपाधि मिली। आचार्य श्री डॉ. शिव मुनिजी के साथ 18 चातुर्मास कर चुके डॉ. शुभम मुनिजी की तीन पुस्तकें- सत्यम-शिवम-शुभम, शिवाचार्य वचनामृतम और शिवाचार्य ध्यानामृतम प्रकाशित हो चुकी है। सादड़ी मारवाड़ जहाँ श्रमण संघ की स्थापना हुई थी वहां वरिष्ट प्रवर्तक श्री रूपचंद जी म.सा. ने आपको श्रमण संघ के सहमंत्री का पद प्रदान करते हुए आशीर्वाद दिया।

आचार्यश्री की व्यक्तिगत सेवा में समर्पित शुभम मुनि की श्रमण संघ में पहचान है- ऐसा जिम्मेदार युवा संत जिसे गुरुदेव कोई भी काम सौपते हैं तो वह गुणवत्ता के साथ समय पर पूरा होगा ही।

ध्यान बाहर से अंदर की यात्रा

मुन्नालाल जैन, एम.ए.
(जैनोलाजी, राजनीतिक विज्ञान, अंग्रेजी) एम.कॉम.

ध्यान एक 'अ-मन' अवस्था है।

ध्यान अंदर उपजने वाले भावों की शून्यता है।

ध्यान अन्तर जागरण की अवस्था है।

ध्यान अपने अंदर व्याप्त परम प्रकाश की खोज का अन्तिम मार्ग है जिस मार्ग पर पहुंचने से पूर्व अशरीरी स्थिति प्राप्त करनी होती है।

ध्यान साधन है, साध्य नहीं।

ध्यान परिधि से केंद्र की ओर जाने वाली यात्रा है।

ध्यान एक ऐसी स्थिति है जिसमें स्वयं को स्वयं से परिचय प्राप्त करने का अवसर मिलता है।

ध्यान सत्योप्लब्धि का सहज, सरल और सटीक मार्ग है।

ध्यान आनन्द की उपलब्धि की साधना है।

ध्यान ज्ञाता भाव व दृष्टा भाव की अनुभूति है।

ध्यान मनशून्यता और देहशून्यता प्राप्ति का अभ्यास है।

ध्यान पूर्व संचित कर्मों के रेचन का उपाय है।

ध्यान आंतरिक विचारों से मुक्ति की साधना है।

ध्यान सतत सावधान व होशपूर्वक जीवित रहने की स्थिति है।

ध्यान वर्तमान में जीने की विधि है।

ध्यान आत्म-रमण का प्रयास है।

ध्यान द्वारा आर्य मौन की साधना परिपक्व होती है।

ध्यान एक वैज्ञानिक व्यवस्था है जो प्रत्येक मनुष्य के लिए प्रभावकारी है और प्रत्येक को अपने परिणाम प्राप्त करवाता है।

रहीम के दोहे आप सबने पढ़े और सुने हैं। रहीम कृष्ण भक्त थे। वे स्वभाव से बड़े दानी थे। उनकी विशेषता थी कि दान करते समय अपनी आँखे झुका लेते थे। लोगों को आश्चर्य होता था कि रहीम दान करते है पर शर्माते हैं। यह चर्चा तुलसीदास तक पहुंची। वे मुस्कुराए और उन्होंने दो पंक्ति लिखकर रहीम को भेजी।

ऐसी देनी देन क्यों, कित सीखे हो सेन
ज्यों-ज्यों कर ऊँचो करो त्यों-त्यों नीचे नैन

रहीम समझ गए। तुलसीदास जान- बुझकर सवाल कर रहे हैं। उन्होंने भी जवाब में दो पंक्ति भेज दी। रहीम ने लिखा -

देनहार कोई और है, भेजत ज्यों दिन- रैन
लोग भ्रम हम पर करें, तासों नीचे नैन

आत्म ध्यान

ME WITHIN ME

ध्यान गुरु आचार्य डॉ. शिवमुनि और लाला नेमनाथ जैन (इंदौर)

आभार...

श्रमण संघीय चतुर्थ पट्टधर युगप्रधान आत्मज्ञानी ध्यानगुरु आचार्यश्री डॉ. शिव मुनिजी के उदयपुर चातुर्मास पर यह पुस्तक आपको सौंपते हुए मुझे अपार खुशी हो रही है। आचार्यश्री डॉ. शिव मुनिजी के भीलवाड़ा चातुर्मास- 2016 के अवसर पर उनकी आत्मकथा और आत्म ध्यान की खोज पर एक पुस्तक स्व की यात्रा का इसे विस्तार कह सकते हैं। उस समय हमने यह सोचा था कि आत्म ध्यान को जन-जन के ध्यान की पहचान मिलना चाहिए। यह उसी सोच का सुफल है।

परम पूज्य आचार्यश्री डॉ. शिव मुनिजी का मैं हृदय से आभारी हूँ कि उन्होंने मुझे इन पुस्तकों को लिखवाने और प्रकाशित करवाने की अनुमति प्रदान की। यह मेरी जीवन संगिनी (स्व. प्रकाशवंती जैन) का स्वप्न था. उनके जीवन काल में तो योग नहीं बने, विलम्ब से सही, उनकी इच्छा पूरी हुई इसके लिए आचार्यश्री डॉ. शिव मुनिजी को सादर नमन।

देश के विभाजन के बाद मेरा परिवार घर-व्यापार छोड़कर रावलपिंडी से व्हाया दिल्ली खाली हाथ इंदौर आया था। रिफ्यूजी की हैसियत से मैंने यहाँ नौकरी करते हुए इंजीनियरिंग की पढाई की और कुटीर उद्योग से शुरू करके प्रेस्टीज ग्रुप की स्थापना की। जीवन के अच्छे- बुरे हर दौर में मेरी प्रेरणा बने जैन साधु- संत। जिनसे मैंने सीखा है- धनोपार्जन बुराई नहीं है, धन से आसक्ति बुराई है। जो कमाओ उसका एक अंश धर्म और समाज के लिए खर्च करो। इन संस्कारों के कारण मैं और मेरा परिवार जैन साधु- संतो की सेवा को अपना परम सौभाग्य मानता है। इन्हीं संस्कारों के कारण मैं जैन कांफ्रेंस से जुड़ा। यूँ तो सभी जैन साधु संतो का मुझे और मेरे परिवार को स्नेह मिला है। आचार्यश्री डॉ. शिव मुनिजी तो हैं ही उदारमना।

आचार्यश्री डॉ. शिव मुनिजी ने श्रमण संघ के अनुशासित संचालन के साथ जैन कांफ्रेंस को भी संयमित और मर्यादित व्यवहार के लिए निरपेक्ष भाव से तैयार किया

है। आत्म ध्यान शिविरों में आप सबकी खासकर गैर- जैन साधकों की भागीदारी से मेरा यह विश्वास पुख्ता हुआ है कि भगवान महावीर की साधना से जन्मा आत्म ध्यान जन- जन का ध्यान है। आचार्यश्री डॉ. शिव मुनिजी के मार्गदर्शन में उनके ज्येष्ठ शिष्य-द्वय श्री शिरीष मुनिजी और श्री शुभम मुनिजी तथा शिवाचार्य ध्यान सेवा समिति के अध्यक्ष श्री सुशील जैन जिस मनोयोग से लोगों को आत्म ध्यान साधना के लिए प्रेरित कर रहे है वह सराहनीय है।

मैं इन पुस्तकों के लेखक श्री प्रकाश बियाणी को भी धन्यवाद देता हूँ।

भगवान महावीर से प्रार्थना है कि आचार्यश्री डॉ. शिव मुनिजी दीर्घायु हो और स्वस्थ रहे. उनका आत्म-ध्यान अभियान विश्वव्यापी बने। इस मंगल कामना के साथ...

-नेमनाथ जैन
फाउंडर चेयरमेन,
प्रेस्टीज समूह, इन्दौर

शिव साहित्य

(प्रकाशक: शिवाचार्य ध्यान सेवा समिति)

आगम एवं साहित्य : आचार्य सम्राट श्री आत्मारामजी महाराज के 22 आगम एवं समस्त साहित्य का सम्पादन

आचार्य सम्राट श्री शिवमुनिजी महाराज द्वारा लिखित साहित्य

शोध ग्रन्थ :-

भारतीय धर्मों में मुक्ति विशेष जैन धर्म के संदर्भ में (शोध ग्रन्थ)

ध्यान एक दिव्य साधना (शोध ग्रन्थ)

ध्यान साहित्य :-

जैनागमों में अष्टांग योग

ध्यान पथ (विविध ध्यान विधियों पर प्रकाश)

आत्म ध्यान स्वरूप एवं साधना

सिद्धालय का द्वार : समाधि

वीतराग विज्ञान भाग 1 व 2

आत्म ध्यान योग साधना (सचित्र योगासन)

ध्यान से ज्ञान भाग 1 व 2

लोगस्स : ध्यान विधि (सीडी सहित)

Self Meditation (Nature and Pratice)

Self Development by Meditation

जीने की कला साहित्य :-

आ घर लौट चलें

योग मन संस्कार (आहार भाव-प्रतिक्रमण, बाल संस्कार)

अमृत की खोज (श्रद्धा पर विशेष)
साधक व्रत आराधना

प्रवचन साहित्य :-

अहासुहं देवाणुप्पिया (पर्युषण पर विशेष प्रवचन)
संबुज्झह किं ण बुज्झह
नदी नाव संजोग
मा पमायए
अन्तर्यात्रा
शिवधारा
अनुश्रुति
सद्गुरू महिमा
पढमं नाणं

जैन तत्व विद्या :-

जैन ज्ञान प्रकाश (प्रश्नोत्तर शैली में जैन दर्शन का ज्ञान)
जैन तत्व कलिका विकास
(नौ कलिकाओं में विभक्त जैन दर्शन)
जैन धर्म शिक्षावली भाग 1 से 8
अध्यात्म सार (आचारांग सूत्र पर दिव्यवाणी)
जिनशासनम् (श्रमण संघ इतिहास एवं आचार्यों का परिचय)

जीवन चरित्र :-

प्रकाश पुंज महावीर (हिन्दी एवं पंजाबी)
शिवाचार्य जीवन दर्शन (अनुपलब्ध)
आधुनिक युग के सूर्य आचार्य शिवमुनि
स्व की यात्रा (*Voyage Within*)
युग प्रधान - अमृत पुरूष

प्रवचन गीत :-

सत्यम् शिवम् शुभम्

पंजाबी साहित्य :-

चाननं मुनारा महावीर (भगवान महावीर का चरित्र)

अंग्रेजी साहित्य :-

The doctrine of Liberation in Indian Religion

Religions with Special reference to Jainism

Spiritual Practices of Lord Mahavira

Return to Self

The Jaina Pathway to Liberation

The Fundamental Principles of Jainism

The Doctrine of the self in Jainism

The Jaina Tradition

The Doctrine of Karma & Transmigration in Jainism

सी.डी., डी.वी.डी. एवं पेन ड्राईव :-

- मुक्ति द्वार चातुर्मासिक प्रवचन भाग 1 से 100
- समाधि तंत्र (डी.वी.डी.का सेट)
- उत्तराध्ययन सूत्र (डी.वी.डी.का सेट)
- सोऽहं
- कोऽहं
- शिवोऽहं
- प्रार्थना एवं मंगल मैत्री
- शिवाचार्य भजनामृत
- शिव शुभम भजनामृत
- जिनवाणी
- अंतर्यात्रा
- आत्म शिव ध्यान (पेन ड्राईव)

-: प्राप्ति हेतु सम्पर्क सूत्र :-

शिवाचार्य ध्यान सेवा समिति :-
एफ- 3/20 ओंकार धाम रोड़, रामा विहार,
नजदीक रोहिणी सेक्टर 22, दिल्ली-81
मो. 9350111542

शिवाचार्य ध्यान सेवा समिति :-
श्री आदीश्वर धाम, मु.पो. कुप्पकलां,
जिला-संगरूर, पंजाब-148019
मो. 9416034463

श्री अनिल जैन :-
ओसवाल कॉस्मेटिक्स,
1924, गली नं0: 5, कुलदीप नगर,
लुधियाना - पंजाब
मो. 94170-10298

प्रकाश बियाणी

बिजनेस वर्ल्ड पर प्रकाशित पुस्तकें

शून्य से शिखर (हिंदी/गुजराती/मराठी)
जी, वित्तमंत्रीजी! (हिंदी/अंग्रेजी)
इंडियन बिजनेस वुमेन (हिंदी/गुजराती/मराठी/अंग्रेजी)
लोकल से ग्लोबल (हिंदी)
इस्पात पुरुष लक्ष्मी मित्तल (हिंदी/गुजराती/मराठी)
25 सुपर ब्रांड्स (हिंदी)
द बॉस : स्वामी बनें, सेवक नहीं (हिंदी/मराठी)
द बिजनेस गेम चेंजर (हिंदी/गुजराती/मराठी/अंग्रेजी)
खदानों से ख्वाबों तक संगमरमर (हिंदी)
पदचिन्ह (स्व. रतनलाल पाटनी 'बाबा साहब' आर.के मार्बल) आत्मकथा
बाधाओं से बुलंदी पर (लाला नेमनाथ जैन, प्रेस्टीज समूह) आत्मकथा
पारस पुरुष (श्रीश्रीकिशन मतलानी, सोनिक बायोकेम) आत्मकथा
स्व की यात्रा (ध्यानगुरू डॉ. शिवमुनि जी) आत्मकथा आदि...

स्तंभ

दिव्य भास्कर (गुजरात) : सक्सेस एंड स्ट्रेटेजी
दैनिक भास्कर (बिहार/झारखंड) : ब्रांड स्टोरी
लोकमत समाचार (महाराष्ट्र)
ग्राम संस्कृति (मध्यप्रदेश/छत्तीसगढ़) : शून्य से शिखर
कार्पोरेट छत्तीसगढ़ : सक्सेस सागा

संपर्क-
प्रकाश बियाणी prakashbiyani@yahoo.co.in
(0)9303223928/ 9893023928

आपसे कोई पूछे कि आप कौन है तो आप अपना नाम बताएँगे। आपके माता पिता ने आपको एक नाम दिया और आप वह हो गए। पर जब आपका जन्म हुआ तब आपका कोई नाम नहीं था, पर आप थे। जब आप माँ की कोख में थे, तब भी नाम नहीं था, पर आप थे। स्पष्ट है कि आप केवल 'नाम' नहीं है। आप पर नाम की मुहर लगा दी गई है। आप कहते हैं कि मैं अमुक व्यक्ति का पुत्र हूँ। लेकिन किसी का पुत्र होना, आप होना नहीं है। आप जन्मे तब इन्सान थे। आप बड़े हुए तो आपसे कहा गया- हिन्दू हो, मुसलमान हो, जैन हो या सिख हो। आप वह हो गए। होश में आने के पहले ही आप पर एक मुखौटा लगा दिया गया। यह नाम, यह धर्म आपकी नेम प्लेट बन गया। डाकिया आपके नाम की डाक वहां डिलीवर करने लगा पर वास्तव में जहाँ से आप आए हो वहां आपका यह नाम या पता (धर्म) नहीं है। स्पष्ट है कि आप एक 'नाम' नहीं हैं! आप किसी के 'पुत्र' नहीं है! आपका कोई धर्म नहीं है! आप 'शरीर' भी नहीं हैं! तो फिर क्या हैं आप?

आप एक आत्मा हैं। चिन्मय आत्मा। वह आत्मा जो कभी मरती नहीं है, जो कभी जन्म नहीं लेती। वह आत्मा जो सदा शाश्वत है। चिर नूतन है। कबीर ने इसीलिए कहा है-

'साधो! यह तनु मिथ्या जानो! या भीतर जो राम बसत है, सांचा ताहि जानो'।

अर्थात, यह तन मिथ्या है। इस तन से जुड़ी हर वस्तु, हर सम्बन्ध मिथ्या है। तन के भीतर जो जीव (राम) है, वही सत्य है। उस सत्य को जानो। उस सत तत्व की उपासना करो। कबीर से बहुत पहले भगवान महावीर ने कहा था- 'आत्म तत्व के अतिरिक्त जो कुछ भी है, वह आपका नहीं है'।

***ME WITHIN ME** यानि खुद की खोज ही आत्म ध्यान है। अतीत की याद, भविष्य की कल्पना (आशंका) और वर्तमान के प्रति आसक्ति से विवेकपूर्ण मुक्ति आत्म ध्यान है। मन की क्रिया और प्रतिक्रिया शून्य हो जाना आत्म ध्यान है। राग-द्वेष से परे अज्ञात में प्रवेश आत्म ध्यान है। उस शुद्ध अवस्था की प्राप्ति और अपने स्वरूप का बोध आत्म ध्यान है जिसे जैन दर्शन परमात्मा में रूपांतरण कहता है।*

093541 01541